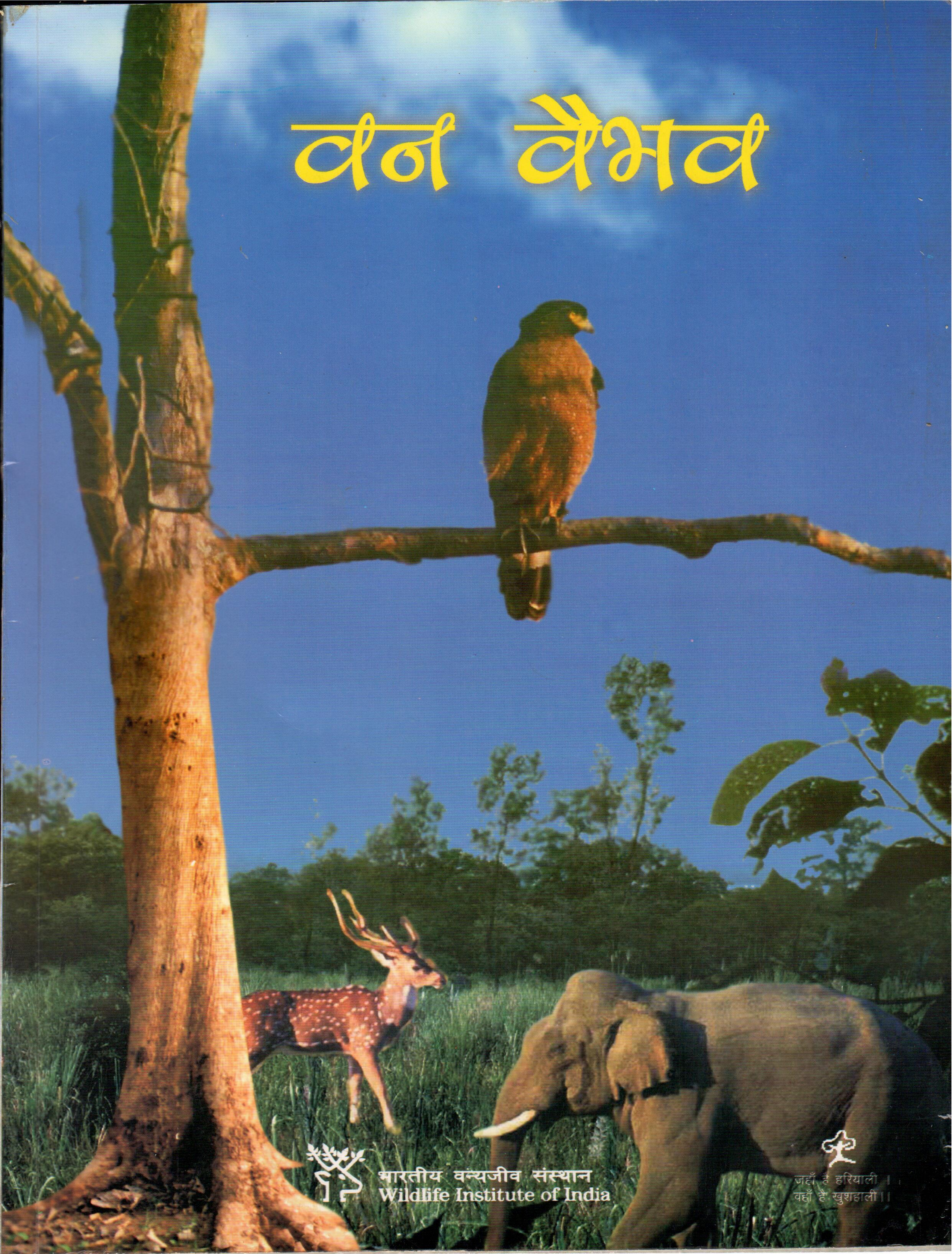

वन वैभव
भारतीय वन्यजीव संस्थान
Wildlife Institute of India
जहाँ है हरियाली ।
वहाँ है खुशहाली ।।

संदेश

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है, कि भारतीय वन्यजीव संस्थान, देहरादून द्वारा विभागीय हिन्दी पत्रिका का प्रथम अंक प्रकाशित किया जा रहा है।

हमारा देश अनेक भाषाओं, धर्मों, जातियों एवं पर्वों का देश है। अनेक प्रकार की विभिन्नताओं के होते हुए भी इस में राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता परिलक्षित होती है । राजभाषा हिन्दी इन्हीं विभिन्नताओं के मध्य सम्पर्क का एक सशक्त माध्यम है। योगीराज अरविन्द के शब्दों में *"भारत के विभिन्न प्रदेशों के बीच हिन्दी के प्रचार–प्रसार द्वारा एकता स्थापित करने वाले व्यक्ति ही सच्चे भारतीय बन्धु हैं।"*

इस पत्रिका का मूल उद्देश्य राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देना है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका अपनी रचनाओं व लेखों के माध्यम से राजभाषा हिन्दी के प्रचार व प्रसार में उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पत्रिका की सफलता हेतु मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ।

एस. सिंगसिट

(एस. सिंगसिट)
निदेशक

कुलसचिव की कलम से

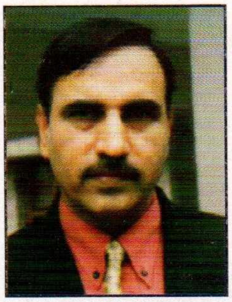

हिन्दी निज राष्ट्र का गौरव है । हिन्दी में कार्य करना और हिन्दी में कार्य करने वालों को प्रोत्साहित करना हमारा राष्ट्रीय दायित्व भी है । **हिन्दी को राजभाषा के दर्जे तक** पहुँचाने में देश के बहुसंख्यक जनों का योगदान है, जिसमें अहिन्दी–भाषियों का योगदान विशेष रूप से स्मरणीय है। संस्थान के कार्मिकों को हिन्दी में अपनी लेखन–क्षमता को उजागर करने के उद्देश्य से संस्थान की ओर से यह एक विनम्र प्रयास है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ अनादि काल से जीव–जन्तुओं तथा वनस्पतियों की पूजा की जाती रही है लेकिन सभ्यता का विकास होने के साथ–साथ मनुष्य ने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अपनी आजीविका तथा ऐशो–आराम के लिए करना प्रारम्भ कर दिया। मनुष्य ने उन जीव–जन्तुओं तथा वनस्पतियों की चिन्ता करना छोड़ दिया, जिनका आगमन इस पृथ्वी पर उससे भी पहले हुआ था।

आर्थिक प्रगति के सामने, वन संसाधनों का संरक्षण लम्बे समय तक गौण रहा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में व्यापक संरक्षण प्रबंधन रणनीति अपनाने की आवश्यकता महसूस की गई। हमारा ध्यान केवल आर्थिक उपलब्धि पर केन्द्रित न रहकर देश के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तथा इन पर आश्रित जन–सामान्य की आवश्यकताओं पर केन्द्रित हो गया। इस रणनीति के तहत् देहरादून में 1982 में भारतीय वन्यजीव संस्थान (भा0व0सं0) की स्थापना की गई। इस संस्थान को वन्यजीव प्रबंधकों, शोधकर्त्ताओं, संरक्षणविदों व रुचि रखने वाले अन्य समूहों को संरक्षण के क्षेत्र में प्रशिक्षित करने तथा वन्यजीव संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन संबंधी मामलों पर अनुसंधान करने और सलाह देने का कार्य सौंपा गया। यह कार्य आसान नहीं था, किन्तु समर्पित और सामूहिक प्रयासों तथा भारत सरकार के प्रशंसनीय सहयोग के फलस्वरूप अब यह सपना साकार हो गया है।

भा0व0सं0 के कार्यक्रम मुख्यतः क्षेत्र आधारित हैं, जिनका आयोजन देश भर में किया जाता है, जिससे यहाँ के संकाय सदस्यों तथा तकनीकी कर्मचारियों को कार्यक्षेत्रीय स्थितियों की जानकारी मिलती रहती है और वे शिक्षा तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इन जानकारियों का समावेश करते रहते हैं। इस प्रकार विशाल क्षेत्रीय भू–भागों में जीवविज्ञानीय, पारिस्थितिकीय, सामाजिक–आर्थिक तथा मानवीय पहलुओं को समाकलित करने में भी सहायता मिलती है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय निकायों के साथ द्विपक्षीय सहयोग तथा समन्वय में कार्य करते हुए इस संस्थान के क्रिया–कलाप, व्यापक और बहुआयामी हो गये हैं। इस प्रकार व्यापक जानकारियों तथा अद्यतन तकनीकों के अनुसार कार्य करते हुए एक मजबूत सांस्थानिक संरचना का विकास हुआ है। संस्थान की बढ़ती हुई क्षमता से प्रभावित होकर यूनेस्को ने भा0व0सं0 को क्षेत्रीय प्रशिक्षण केन्द्र घोषित करने के लिये प्रोत्साहित किया और दक्षिण तथा दक्षिण–पूर्वी एशियाई देश प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के व्यावसाइयों को यहाँ प्रशिक्षण के लिए भेज रहे हैं।

वर्ष 1982 में शोध, शिक्षण व विस्तार हेतु वन्यजीव प्रशिक्षण व नियोजन की गतिविधियों में विस्तार के लिये भारतीय वन्यजीव संस्थान के उद्‌भव की घोषणा हुई। श्री वी0 बी0 सहारिया ने भा0व0सं0 के पहले निदेशक का कार्यभार संभाला। वर्ष 1983 में फूड एण्ड एग्रीकल्चर आर्गेनाइजेशन / यूनाइटेड नेशन डेवलपमेंट प्रोग्राम (एफ0ए0ओ0 / यू0एन0डी0पी0 के साथ सहयोग प्रारम्भ हुआ। वर्ष 1984 में भारतीय वन्यजीव संस्थान के लिए घटनापूर्ण (महत्वपूर्ण) वर्षः– बच्चों को प्राकृतिक वातावरण मिला, वन्यजीव चित्र सम्बन्धी प्रदर्शनी लगाई गई, हमारे विस्तार प्रयासों का शुभारम्भ एवम् वन रेंजरों के लिए सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम प्रारम्भ हुआ। राष्ट्रीय पार्क तथा

सुरक्षित क्षेत्रों के सदस्यों का एक सम्मेलन कार्बेट राष्ट्रीय पार्क में आयोजित हुआ। भारतीय वन्यजीव संस्थान के नये परिसर, के लिए चन्द्रबनी में आधारशिला स्थापित की गई। वर्ष 1985 में क्षेत्रीय अनुसंधान कार्यक्रमों के लिए भारतीय वन्यजीव संस्थान ने अपनी एक शोध सलाहकार समिति स्थापित की। वर्ष 1986 में भारतीय वन्यजीव संस्थान एक स्वायत्तशासी संस्थान बना। पहली सलाहकार परियोजना– "भारत में वन्यजीव संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क का नियोजन" के साथ नये उत्तरदायित्व प्रारम्भ हुए। राष्ट्रीय वन्यजीव डाटाबेस प्रारम्भ किया गया। नये संकाय सदस्यों के समूह ने कार्यभार ग्रहण किया। पहली अन्तर्राष्ट्रीय सहयोगी स्नो लेपर्ड संगोष्ठी श्रीनगर में तथा दूसरी "वन्यजीव शिक्षा के क्षेत्र में विश्वविद्यालयों की भूमिका" नामक विषय पर आयोजित की गई। इसी वर्ष रक्षा सेवाओं से अधिकारियों के लिए पहला उन्मुखीकरण पाठ्यक्रम आयोजित किया गया।

वर्ष 1987 में वन्यजीव विज्ञान में पहला स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रारम्भ हुआ। सेंटर फॉर एनवायरनमेंट एजुकेशन, अहमदाबाद के सहयोग से आयोजित पहली कार्यशाला में संरक्षित क्षेत्र प्रबंधकों को वन्यजीव व्याख्या से भलीभाँति परिचित कराया गया। वर्ष 1988 में भारतीय वन्यजीव संस्थान ने प्रशिक्षण कार्यक्रमों को नया लक्ष्य व उद्देश्य बनाया। बांदीपुर टाइगर रिज़र्व में वरिष्ठ वनाधिकारियों के लिए वन्यजीव प्रबंधन में पहला दो सप्ताह का कैप्सूल पाठ्यक्रम आयोजित किया गया। भारतीय वन्यजीव संस्थान ने चिड़ियाघर प्रबंधन तथा कैप्टिव ब्रीडिंग पर इसकी सलाहकार परियोजना के द्वारा बाहरी संरक्षण पर भी विचार व्यक्त किये। संस्थान द्वारा वन्यजीव प्रबंधन तकनीकों पर एक मैन्युअल, भारतीय फेजेंट पर एक लघु पुस्तिका तथा भारत में वन्यजीव सुरक्षित क्षेत्र नेटवर्क के नियोजन पर पहली रिपोर्ट प्रकाशित की गई। वर्ष 1989 में उत्कृष्टता के अनुसरण में प्रगति की ओर अग्रसर, भारतीय वन्यजीव संस्थान ने एक संकाय विकास परियोजना पर यूनाइटेड स्टेट फिश एण्ड वाइल्डलाइफ सर्विसेस (यू0एस0एफ0डब्ल्यू0एस0) के साथ सहयोग किया। भारतीय वन्यजीव संस्थान ने दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेले के दौरान "हमारा पर्यावरण–हमारा भविष्य" प्रदर्शनी में भाग लिया। वन्यजीव तथा जन–मानस पर कार्यक्षेत्र हाथी प्रबन्धन पर कार्यशालाएं तथा वन्यजीव स्वास्थ्य तथा रोग निगरानी इस वर्ष की मुख्य विशेषता रही। वर्ष 1990 में भारतीय वन्यजीव संस्थान ने चिड़ियाघर प्रबंधन में प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया। संस्थान ने यूनाईटेड नेशन्स एजुकेशन, साईंटिफिक एण्ड कल्चरल आर्गेनाइजेशन (यूनेस्को) के साथ सहयोग किया तथा संरक्षित क्षेत्र बफर ज़ोन प्रबंधन पर एक सेन्ट्रल व साउथ एशिया क्षेत्रीय प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित की। भा0व0सं0–यू0एस0एफ0डब्ल्यू0एस0 परियोजना के अन्तर्गत् सम्मेलन/कार्यशालाएं आयोजित की गई (अ) प्रबंधित वनों में वन्यजीव, (ब) एकीकृत वन नियोजन तथा प्रबंधन, (स) उच्च क्षेत्रीय पारिस्थितिकी एवं (द) भारत सरकार के अनुरोध पर भारतीय वन सेवा के अधिकारियों के लिए संस्थान ने अनिवार्य प्रशिक्षण प्रारम्भ किया। वर्ष 1991 में भा0व0सं0 ने वन्यजीव संरक्षण पर राष्ट्रीय स्तर तथा उससे सम्बद्ध सेवाओं के लिए एक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया। भा0व0सं0–यू0एस0एफ0डब्ल्यू0एस0 परियोजना के अन्तर्गत् निम्न कार्यशालाएं आयोजित की गई (अ) एकीकृत वन नियोजन तथा प्रबंधन पर राष्ट्रीय कार्यशाला, (ब) संरक्षण की शिक्षा व व्याख्या, (स) रसायन नियंत्रण तकनीक ।

वर्ष 1992 में संस्थान के भूतपूर्व निदेशक श्री एच0एस0 पंवार को आई0यू0सी0एन0 द्वारा "ट्री ऑफ लर्निंग" पुरस्कार प्राप्त हुआ। इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंसरवेशन ऑफ नेचर (वर्ल्ड कंजरवेशन यूनियन)/स्पीसीज़ सर्वाइवल कमीशन – एशियन राइनो स्पेशलिस्ट ग्रुप (आई0यू0सी0एन0/एस0एस0सी0 –आई0एस0आर0ओ0एस0जी0) के प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में संस्थान के संकाय सदस्यों ने प्रतिनिधित्व किया। पर्यावरण से सम्बन्धित सूचना एकत्र करने के उद्देश्य से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा पर्यावरण सूचना तंत्र (EIS) की स्थापना की गई। वर्ष 1993 में पारिस्थितिकी विकास एवं नियोजन पर प्रथम प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित हुआ। वर्ष 1994 में संस्थान की अनेक शोध परियोजनाओं के लिए शोधकर्त्ताओं की नियुक्ति की गई। साथ ही इनके लिए एक ओरियेंटेशन प्रोग्राम आयोजित किया गया। विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित इंडो–ब्रिटिश अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला में भारतीय वन्यजीव संस्थान ने सक्रिय रूप से भाग लिया। वर्ष 1995 में विश्व बैंक सहयोगी सलाहकार परियोजना पर कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। वर्ष 1996 में इण्डियन लाइब्रेरी एसोसियेशन की अखिल भारतीय लाइब्रेरी

कांफ्रेस में श्री एम0एस0 राणा, पुस्तकालयाध्यक्ष को आई0एल0ए0–कौला सर्वश्रेष्ठ पुस्तकालयाध्यक्ष पुरस्कार – 1995 प्रदान किया गया। विश्व बैंक की एनवायरनमेंटल रिसोर्स मैनेजमेंट नेटवर्क (ई0आर0एम0एन0) अनुदान के अन्तर्गत् शोधवृत्ति के अवसर प्राप्त हुए।

वर्ष 1997 में संरक्षण के क्षेत्र में कार्य करने में तेजी आई । संस्थान विभिन्न वन विभागों तथा अन्य एजेंसियों को प्रशिक्षण एवं अनुसंधान के क्षेत्र में सहयोग प्रदान करने में प्रयत्नशील रहा। वर्ष 1998 में वर्ष के प्रथम न्यूज़लैटर को World Wide Web में स्थान मिला।

देश की स्वतन्त्रता की पचासवीं वर्षगाँठ के अवसर पर वन्यजीव संरक्षण, शोध एवं प्रबंधन पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। वर्ष 1999 में संस्थान ने समूचे देश तथा एशियाई क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई। संस्थान के विभिन्न पाठ्यक्रमों में पड़ोसी देशों के प्रतिभागी भी शामिल हुए। देश–विदेश की बढ़ती हुई प्रशिक्षण की मांग को पूरा करने के लिए संस्थान के संकाय का विस्तार किया गया। वर्ष 2000 में वन्यजीव संरक्षण व प्रबन्धन की सूचना एवं विश्लेषण उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वन्यजीव नीति शोध प्रकोष्ठ की स्थापना की गई। भारतीय वन सेवा अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी देहरादून के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये। संस्थान के अतिरिक्त सांस्थानिक ब्लॉक का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ। वर्ष 2001 में दिनाँक 3 अक्टूबर को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में सम्माननीय उपराष्ट्रपति श्री कृष्ण कान्त द्वारा संस्थान को वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्र में उसके विशिष्ट योगदान के लिये वर्ष 1999 का राजीव गाँधी वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार (सांस्थानिक श्रेणी)– प्रदान किया गया। इस अवसर पर सम्माननीय पर्यावरण एवं वन मंत्री श्री टी0 आर0 बालू सहित अनेक वरिष्ठ अधिकारी एवं गणमान्य जन उपस्थित थे। वर्ष 2002 में संस्थान में इन्ट्रानेट सेवा का उद्घाटन किया गया। दिनाँक 27 मार्च, 2002 को माननीय पर्यावरण मंत्री श्री टी0 आर0 बालू द्वारा श्री एम0 एस0 राणा को वर्ष 2000 के लिये तकनीकी कोटि के लिये निर्धारित उत्कृष्ट निष्पादन हेतु प्रथम आशा एवं हेमेन्द्र पँवार पुरस्कार प्रदान किया गया। भा0व0सं0 के वैज्ञानिक डा0 पी0के0 मलिक को वर्ष 2002 के लिए वाइल्ड टाइगर्स, वन्यजीव तथा भारत के विल्डरनेस क्षेत्रों की प्रतिबद्धता के लिए वर्ष 2002 के लिए "कार्ल जैश रोल ऑफ ऑनर" पुरस्कार प्रदान किया गया । संस्थान के ही एक अन्य वैज्ञानिक डा0 आर0एस0 चुन्दावत का पन्ना, मध्य प्रदेश, भारत के टाइगर पर वैज्ञानिक शोध में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए कार्ल जैश वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार प्रदान किया गया ।

वर्षानुक्रम में संस्थान की गतिविधियों एवम् उपलब्धियों के बारे में उपरोक्त जानकारी साराँश में दी गई है। संस्थान ने बीस वर्षो के संक्षिप्त काल में अपने शासनादेश के अनुसार और भी अधिक कार्य पूर्ण किये हैं और भविष्य में कई अन्य महत्वाकाँक्षी परियोजनायें निष्पादित करने की योजनायें हैं।

संस्थान में हिन्दी गतिविधियों एवं हिन्दी में कार्यालयीन दायित्वों के निर्वहन को बढ़ावा देने के प्रयास जारी हैं। इसी क्रम में एक प्रयास इस पत्रिका का प्रकाशन भी है।

पत्रिका प्रकाशन के लिये मैं इसकी प्रकाशन समिति एवम् सम्पादक मण्डल को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। इसी अवसर पर मैं अपने समस्त सहयोगियों, संकाय सदस्यों, कर्मचारियों, शोधकर्त्ताओं एवम् छात्रों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। हम सभी के सम्मिलित प्रयासों के फलस्वरूप ही संस्थान राष्ट्रीय एवम् अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाने में सफल हुआ है।

शुभेच्छायें!

(मेहर सिंह)

सम्पादकीय

लेखन, स्वभावतः ही विचित्र अनुभूति है, विशेषकर अपनी मातृभाषा व राजभाषा के गौरव के भाव को हृदयंगम कर। संस्थान के दो दशकों के सफर में इस प्रकार के प्रथम प्रयास को साकार करने की भावना को लेकर भारतीय वन्यजीव संस्थान परिवार के लोग एक साथ अपनी कलम उठाकर अभिव्यक्ति के मार्ग पर चल पड़े। यह अनुभव कई लोगों के लिये नितान्त नवीन था । इस उपक्रम में यदि कोई अवरोध भी आये तो वे भी नव कलमवीरों को चुनौती नहीं दे सके। "पंगु चढ़हि गिरिवर गहन" के मूलमंत्र को आधार मानकर विचारों को कोरे काग़ज पर उतारा गया। रचनाओं का ताना–बाना सम्बन्धों, सरोकारों अपने पर्यावरण व विचारों पर सधा हुआ है ।

कुछ रचनायें तो क्षेत्र–अनुभवों पर आधारित हैं और कुछ व्यक्तिगत विचारों व अनुभूतियों से ओतप्रोत हैं। हालाँकि रचनायें पूर्णतः वैज्ञानिक दृष्टिकोण को लेकर नहीं लिखी गई है, तब भी ये पर्यावरण एवं वन्यजीव संरक्षण के बारे में चिन्ताओं को उजागर करती हैं। वास्तव में यह प्रयास एक नया शौक न होकर अनुभवों में शामिल रचनात्मक व सृजनात्मक पीड़ा का दर्पण है।

हिन्दी, हमारे राष्ट्र की अस्मिता है और इसे अपने सम्मानजनक स्थान पर बनाये रखने के लिये हमारे सार्थक प्रयासों की विशेष आवश्यकता है। हम मात्र हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह या हिन्दी पखवाड़ा मनाकर अपने कर्त्तव्य की इति श्री न समझें बल्कि इसे अपने जीवन का भाग मानकर जियें तो हम राष्ट्रीय दायित्व के निर्वहन में अपना योगदान दे सकेंगे । इस पत्रिका के प्रकाशन में अन्तर्निहित भावना भी यही है । पाठकों से निवेदन है कि वे विभिन्न लेखकों की कलम के प्रवाह में अपने विचारों की नौका को खे कर प्रस्तुत विषयों से तादात्म्य स्थापित कर इनका आनन्द लें।

यह पत्रिका चूँकि प्रारम्भिक कोशिश है, अतः आपके सुझावों व प्रतिक्रियाओं की विशेष आवश्यकता है ताकि आगे और सुधार हो सके।

– सम्पादक मण्डल

उद्देश्य व निर्धारित लक्ष्य

* वन्यजीव विज्ञान में मानव संसाधनों का विकास करना तथा क्षमता बढ़ाना।
* वन्यजीव विज्ञान में सर्वोत्कृष्ट केन्द्र विकसित करना।
* वन्यजीव संरक्षण के लिए परामर्शी व सलाहकारिता सेवायें प्रदान करना।
* वन्यजीव विज्ञान तथा संरक्षण सम्बन्धी विषयों की हिमायत करना।
* वन्यजीव संरक्षण में प्रशिक्षण तथा अनुसंधान के लिए दक्षिण एशिया तथा दक्षिण–पूर्वी एशिया के लिए क्षेत्रीय केन्द्र विकसित करना।
* वन्यजीव विज्ञान के क्षेत्र में मानद् विश्वविद्यालय के रूप में विकास करना।

हमारा ध्येय

भारतीय वन्यजीव संस्थान का ध्येय वन्यजीव विज्ञान के विकास का पोषण करना तथा कार्य क्षेत्र में उसके अनुप्रयोग को इस तरह से प्रोन्नत करना है, जो हमारे आर्थिक–सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश के अनुरूप हो।

अनुक्रमणिका

- कनावर शरण्य : संरक्षण के लिए एक चुनौती – *जी0एस0 रावत व जे0एस0 जलाल* 1
- वन्यजीव एवं पर्यावरण – *किरन भारती* 6
- वन्यजीव–ऐतिहासिक परिवेश में – *मदन सिंह राणा व शशिबाला उनियाल* 7
- लुप्त होता पारम्परिक ज्ञान – *संजय कुमार उनियाल* 10
- करो जीव संरक्षण – *सुरेश कुमार* 11
- आत्मकथ्य एक मौन मित्र का – *अंजली अवस्थी* 12
- सम्भालो पर्यावरण – *राम कुमार चोटिला* 14
- वृक्षों की धार्मिक व औषधीय उपयोगिता – *शशिबाला उनियाल* 15
- विश्व का प्राचीनतम लोकतंत्र – *डा0 (श्रीमती) भगवती उनियाल* 19
- पर्यावरण ह्रास : एक समस्या – *पी0 एस0 धमान्दा* 21
- स्वज्ञान पर आधारित विचार – *भुवनचन्द्र उपाध्याय* 22
- जीवन का वह सरस पर्यावरण – *पप्पू कुमार* 23
- सरकारी कामकाज में हिन्दी के उपयोग की गति धीमी क्यों? इसे गतिमान करने के उपाय – *कृष्ण कुमार श्रीवास्तव* 25
- एक–एक करके देखो – *बलबीर सिंह चौहान* 27
- वन्यजीवों की सुरक्षा एवम् उनकी महत्ता पर प्रकाश – *भुवनचन्द्र उपाध्याय* 28
- राजभाषा का कार्यालय में प्रयोग एवं उसमें आने वाली बाधाएं – *यशपाल सिंह वर्मा* 30
- कुछ भी – *एम0डी0 गुप्ता* 33
- मानव, कर्मयोग तथा उसका कर्त्तव्य – *बी0एल0 शर्मा* 36
- क्या ज्योतिष शास्त्र पर विश्वास करना अंधविश्वास हैं ? – *पं0 पी0के0 मुखर्जी* 40
- जल क्रिया एवं सूत्र नेति : आँखों के लिये वरदान – *लेखनाथ शर्मा* 42
- परम्पराओं की कटी पतंग कहाँ गिरेगी ? – *सुधा जैन* 44
- वृक्षों से वार्तालाप – *बलबीर सिंह चौहान* 45
- पशु कौन ? – *प्रीति श्रीवास्तव* 46
- वाणी का चमत्कार – *सूरत सिंह लाम्बा* 47

- **सत्य का फल** – *बलबीर सिंह चौहान* 50
- **शिक्षाप्रद नीति वचन** – *विभोर तोमर* 50
- **मेरा तो राग अधूरा है** – *नवीन चन्द्र काण्डपाल* 51
- **परम्परा** – *संजय भारती* 51
- **मंजिल** – *बबीता* 52
- **प्रशिक्षण** – *शाम गणपति ढमढेरे* 52
- **भ्रष्टाचार** – *सुधा जैन* 53
- **अर्थहीनता** – *कृष्ण कुमार श्रीवास्तव 'मध्यम'* 53
- **जीवन** – *अंजली अवस्थी* 54
- **अखण्ड भारत आजाद भारत – अहिंसा** – *मदन सिंह राणा* 55
- **मँहगी पढ़ाई** – *चक्षु तोमर* 56
- **रामराज** – *पद्मा रानी* 56
- **मीठे वचन बोल** – *प्रद्युम्न प्रसाद सिंह* 57
- **दफ्तरी व्यंग्य** – *सुधा जैन* 57
- **टाइम पास** – *कृष्ण कुमार श्रीवास्तव 'मध्यम'* 58
- **नारी** – *पद्मा रानी* 58
- **संस्थान में आयोजित हिन्दी गतिविधियां** – *बलजीत कौर* 59

****

कनावर शरण्य : संरक्षण के लिए एक चुनौती

जी0एस0 रावत एवं जे0एस0 जलाल

भा.व.सं., देहरादून

हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले में पार्वती घाटी के पूर्वी ढलान पर स्थित एक छोटा सा शरण्य–कनावर प्रदेश का सबसे पुराना संरक्षण स्थल होने पर भी आज तक अपनी खास पहचान नहीं बना पाया है। यह शरण्य लगभग 62.50 वर्ग कि0मी0 क्षेत्र में फैला है और 31°55'10" से 32°1'13" उत्तरी अक्षाँश तथा 77°17'0" से 77°23'50" पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।

यूँ तो इस क्षेत्र के वनों और वन्यजीवों की रक्षा के लिए सन् 1896 में ही ब्रिटिश शासन ने एक अध्यादेश जारी कर दिया था। तदुपरान्त 28 फरवरी 1954 को तत्कालीन पंजाब सरकार ने (जब हिमाचल, पंजाब का ही हिस्सा था) इस शरण्य को स्थापित करने हेतु शासनादेश निकाला था । परन्तु आज भी प्रदेश एवं देश के अधिकाँश प्रकृति प्रेमी इस शरण्य के बारे में अनभिज्ञ हैं। जब पार्वती घाटी में एक बड़ी जल विद्युत परियोजना शुरू हुई तो सरकार का ध्यान अचानक इस घाटी के आस पास स्थित वनों एवं वन्यजीवों पर गया।

यहाँ पहली बार हमें मोनाल पक्षी की आवाज सुनायी दी। इसके अलावा नाना प्रकार की चिड़ियाँ, छोटे–छोटे फूल वाले पौधों और जड़ी–बूटियों को देखते हुए हम मिंग थाच पहुँचे। इस थाच के बीचोंबीच हमें एक बघेरे के पंजों के निशान और मल दिखाई दिये।

भारतीय वन्यजीव संस्थान से यह अपेक्षा की गयी कि इन दूर–दराज के क्षेत्रों में बचे–खुचे प्राकृतिक स्थलों और शरण्यों में वन्यजीव संरक्षण का आँकलन करें तथा दीर्घकाल तक इनके प्रबंधन हेतु समुचित सुझाव दे। इसी उद्देश्य को लेकर हम 6 जून, 2002 को कुल्लू पहुँचे। वहाँ पर ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क के निदेशक श्री संजीव पाण्डे तथा प्रभागीय वन अधिकारी श्री बी0डी0 सुयाल से विस्तृत वार्तालाप के बाद अगले दिन हम कसोल (कनावर के मुख्य द्वार) की ओर रवाना हुए। कसोल पहुँचते ही हमारा ध्यान वहाँ के ढाबों और छोटे–बड़े दुकानों के आसपास मँडरा रहे सैकड़ों हिप्पीनुमा विदेशियों की तरफ गया। एक ढाबे के अन्दर दो साधुओं का चित्र टंगा था जो शिवबूटी (गांजा) का पान करते दिखाये गये थे और फर्श पर उसी मुद्रा में दो–तीन "विदेशी साधू" ध्यानमग्न बैठे थे। बाजार की आबो–हवा, वाहनों की ध्वनि तथा सैलानियों की भीड़ से बिल्कुल नहीं लग रहा था कि हम किसी शरण्य के अंदर प्रवेश कर चुके हैं। हम यथाशीघ्र वहाँ से दूर प्रकृति की गोद में जाना चाहते थे। इसी बीच श्री सुयाल के निर्देश पर शरण्य के कर्मचारी श्री केसर सिंह और श्री लीलाधर नेगी ने हमारा सामान बँधवा कर आगे की यात्रा का सारा प्रबंध कर दिया था।

दोपहर के करीब साढ़े तीन बजे होंगे हमने ग्राहण नाले की ओर कदम बढ़ाये। यह नाला कनावर शरण्य के शीर्ष बासुवेर ग्लेशियर से निकलता है और उत्तर–पश्चिम दिशा में गहरी कंदराओं से बहता हुआ पार्वती नदी से जा मिलता है। इसी संगम पर कसोल बसा है। चंद कदम रखते ही ठंडी हवा के झोकों ने हमारा स्वागत किया और कसोल की भीड़ और गर्मी से हमें राहत मिली। हमें शाम तक ग्राहण गाँव पहुँचना था, जो कसोल से 9 कि0मी0 दूर है। देवदार, कैल, चीड़, दरल, कोस तथा अन्य मिश्रित वनों के बीच छोटे पेड़–पौधों की पहचान करते केसर सिंह से उनकी उपयोगिता के बारे में चर्चा करते, चिड़ियों और अन्य जानवरों पर नजर रखते हुए हम धीरे–धीरे ग्राहण की तरफ बढ़े। रास्ते में हमें दो औषधि पौधशालाएँ देखने को मिली, जिनमें जड़ी–बूटियाँ लगी थी तथा उनके प्रचार–प्रसार हेतु स्थानीय बोली में पत्थरों पर निम्न वाक्य अंकित थे।

"सभी आंसा वाणा न आंकती री जड़ी बुटी लाणी,
ग्रां रे लोग बाधू आमदनी कर्मोणी।।
ग्रां ग्रां न वन समिति वनाणी।
तो जड़ी बुटी री रख वाली कराणी।।"

रास्ते के दोनों ओर खड़ी चट्टानों और घने जंगलों को देखकर बिलकुल आभास नहीं हो रहा था कि गाँव कैसी जगह पर बसा होगा? खड़ी चढ़ाई के बाद अचानक हमें एक गेहूँ का खेत मिला। खेत के अगल बगल में जंगली शहतूत, बाँज और मोरू के पेड़ खड़े थे जिनकी शाखायें बुरी तरह कटी थीं, तब हमें आभास हुआ कि हम गाँव के निकट पहुँच गये हैं। कुछ कदम बढ़ाते ही हमें पाँच–छः घरों का झुरमुट दिखायी पड़ा।

शाम के लगभग सात बजे होंगे, केसर सिंह हमें अपने परिचित श्री मनीराम के घर पर ले गया। श्री मनीराम और उनके बच्चों ने हमारा हार्दिक स्वागत किया। मनीराम गरम–गरम चाय बना कर लाये। हम लोग चाय की चुस्कियाँ लेते हुए गाँव की छटा का आनन्द लेने लगे। घर से कुछ दूरी पर एक मंदिर स्थित था जिसके प्राँगण में कुछ बच्चे ऊनी–सूती कपड़े व प्लास्टिक के रंग बिरंगे जूते पहने क्रिकेट खेल रहे थे। बच्चों की वेशभूषा व खेल में पिछली व नयी सदी का मिश्रण दिखता था। उस गोधूलि बेला में हमें गाँव का सादगी भरा वातावरण अत्यन्त लुभावना लगा। जल्दी ही हमें भोजन के लिए बुलाया गया, तदुपरान्त एक साफ सुथरे कमरे में आराम करने को कहा गया।

अगले दिन हमने निश्चित किया कि ग्राहण तथा उससे लगे ढुँडाह गाँव की सामाजिक व भौगोलिक परिस्थितियों का अध्ययन किया जाय। ग्राहण व ढुँडाह गाँवों में पुराने खेत समतल जगह में बने हैं, लेकिन बढ़ती जनसंख्या व सीमित खेती के कारण इन लोगों ने नये खेत खड़ी पहाड़ियों पर पेड़ काटकर बनाने शुरू कर दिये हैं जो कि मृदा अपरदन को बढ़ायेगें। ग्राहण हरे–भरे जंगलों की गोद में 2200 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। गाँव में शिक्षा केवल पाँचवी कक्षा तक ही है। यहाँ पर लोगों की जीविका का मुख्य साधन भेड़ पालन है। मई–जून में ट्रैकिंग का सामान ढोकर चार पैसे कमा लेते हैं।

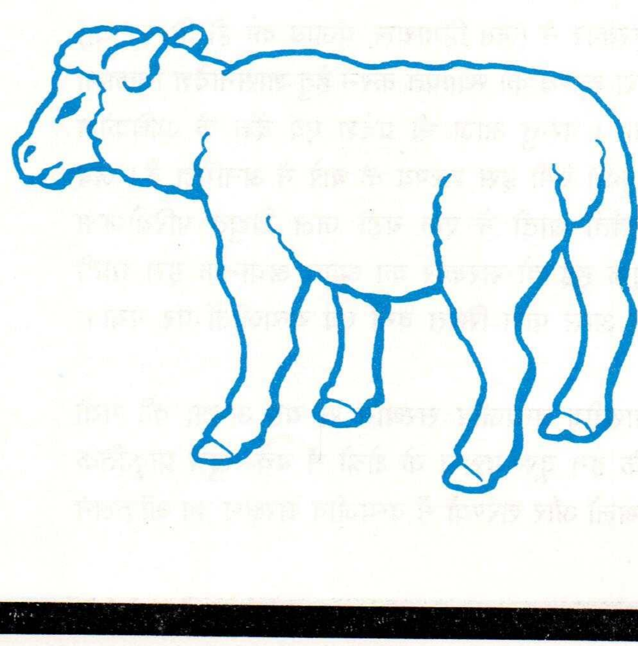

खेती से सिर्फ चार–पाँच महीने के लिए राशन निकलता है। ये लोग मुख्य रूप से गेहूँ, मक्का, जौ, आलू व बीन उगाते हैं। इसके अलावा ये लोग भाँग का उत्पादन भी करते हैं। पहले ये लोग भाँग के रेशे से रस्सियाँ, जूते आदि बनाते थे पर अब 'चरस' बेचने का प्रचलन तेज हो रहा है। अशिक्षा व गरीबी के कारण गाँव की व्यवस्था जर्जर नज़र आती है। जाड़ों में बर्फ गिरने पर ये लोग चार–छः माह तक घरों में ही रहते हैं और कम्बल आदि तैयार करते हैं। ये लोग याज्ञवलक्य ऋषि की आराधना करते हैं। मात्र एक अध्यापक को छोड़कर कोई भी नौकरी पेशे में नहीं आं पाया है। गाँव में चालीस के लगभग मकान हैं जो मुख्य रूप से लकड़ी के बने हैं। परिवार नियोजन के बारे में कोई जानकारी नहीं लगती । कुछ संयुक्त परिवारों में तो पन्द्रह से सोलह तक बच्चे हैं। ऊन की बिक्री में आ रही कमी के कारण इनको अपना यह पारम्परिक व्यवसाय खतरे में नजर आ रहा है। अतः ये लोग अब अन्य जीविका के साधनों की खोज में हैं। ये चाहते हैं कि गाँव तक मोटर रोड हो जिससे ये लोग अन्य उद्योग चला सकें और शिक्षा के लिए जूनियर विद्यालय की जरूरत समझते हैं। गाँव प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से न जुड़े होने के कारण ज्यादातर इलाज जड़ी बूटियों से ही करते हैं जैसे कडु, पतीस, निहाणी, च्योरा, पंजा सर्पगुणी, नीलकण्ठी आदि। गाँववालों को जड़ी–बूटी के उत्पादन व उनके महत्व को समझाकर इस व्यवसाय को आगे बढ़ाया जा सकता है जिससे भविष्य में यह व्यवसाय इनके जीविका का एक अच्छा साधन बन सकता है। एक सर्वेक्षण के अनुसार ग्राहण गाँव में लगभग 40 परिवार, 200 गाय, बैल तथा 2000 के करीब भेड़–बकरियाँ हैं जबकि ढुँडाह में 8 परिवार, 60–70 गाय–बैल तथा 700 के करीब भेड़–बकरियाँ हैं। गाँव में अधिकाँश राजपूत तथा कुछ हरिजन परिवार हैं।

यह खुशी की बात है कि सरकार द्वारा इस गाँव तक बिजली पहुँचायी गयी है लेकिन अन्य सुधारों की ओर अनदेखी की है, जैसे – सुलभ शौचालयों, धूम्ररहित चूल्हों व प्राथमिक चिकित्सा का अभाव।

गाँव की आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियाँ तथा प्राकृतिक संसाधनों पर इनकी बढ़ती निर्भरता को देखकर हमें लगा कि आने वाले दशकों में इस शरण्य के वन शायद ही इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर पायेंगे। गाँव वालों से बातें करके यह एहसास हुआ कि उन्हें इमारती व जलाऊ लकड़ी, घास, चारागाह एवं जड़ी–बूटियों की कमी महसूस हो रही है। दूसरी ओर वन्यजीव विभाग के कार्यक्रमों की तरफ उनका उपेक्षापूर्ण बर्ताव था। कुल मिलाकर हमें शरण्य और गाँववालों दोनों की स्थिति पर अफसोस हुआ। क्या मात्र आर्थिक स्थिति बढ़ाने और मोटर मार्ग यहाँ तक पहुँचाने से स्थिति में सुधार हो पायेगा ? क्या सरकार के पास ऐसे उपाय हैं जिससे दीर्घकाल में गाँव तथा वन दोनों का रख रखाव हो सके ? ऐसे कई प्रश्नों के बीच उलझे हुए हम वापस मनीराम के घर पहुँचे और शरण्य के दूर दराज के स्थानों के भ्रमण की योजना बनाने में लग गये।

तीसरे दिन लगभग साढ़े पाँच बजे चाय के बाद हम लोग मिंग तथा खाचा थाच (भेड़ बकरियों के ठहरने व चरने हेतु खुले चारागाहों को स्थानीय भाषा में 'थाच' कहते हैं) के लिए रवाना हुए। गाँव से कुछ दूर एक झरने के पास बड़ी सी खुली जगह पर दो पुराने मकान हैं, जिनको वन विभाग ने अपने प्रयोग के लिए बनाया था। परन्तु विभाग में पर्याप्त कर्मचारियों के अभाव से इनका रख–रखाव नहीं हो पाया है और ये टूटने के कगार पर हैं। जबकि इन्हीं जर्जर भवनों के सामने खुले मैदान में हर साल ट्रैकिंग कैम्प लगते हैं। इस मैदान को पार कर हम खड़ी

ढलान होते हुए मिंग थाच की ओर बढ़े। लगभग एक किलोमीटर की चढ़ाई के बाद एक भेड़–बकरियों के डेरे पर पहुँचे। दो नवयुवक गड़रियों ने हमें बैठने को कहा और हमें बकरी का गरम–गरम दूध पिलाया। ये नवयुवक ग्राहण के ही निवासी थे जो कि जाड़ों में अपनी भेड़–बकरियों को लेकर प्रदेश की निचली घाटियों (बिलासपुर तथा मंडी) के जंगलों में चले जाते हैं। ये बिलासपुर से वापस आकर ग्राहण होते हुए कनावर शरण्य के ऊँचे इलाकों में जा रहे थे, जहाँ ये सितम्बर तक रहेंगे। उन्होंने हमें बताया कि ग्राहण तथा ठुँडाह गाँव के कई परिवार इसी तरह साल भर कनावर, पार्वती घाटी तथा बिलासपुर के जंगलों में अपनी भेड़ बकरियाँ घुमाते रहते हैं। नवयुवकों से कुछ समय बातें करके हम आगे बढ़े और जल्दी ही रई, तोस, कैल, रखाल, मोरू और खरंसू के मिश्रित वनों में पहुँचे। यहाँ पहली बार हमें मोनाल पक्षी की आवाज सुनायी दी। इसके अलावा नाना प्रकार की चिड़ियाँ, छोटे–छोटे फूल वाले पौधों और जड़ी–बूटियों को देखते हुए हम मिंग थाच पहुँचे। इस थाच के बीचोंबीच हमें एक बघेरे के पंजों के निशान और मल दिखाई दिये। शीघ्र ही वृक्ष रेखा के पास भोजपत्र और सिमरू के जंगलों से गुजरते हुऐ एक बड़े से मैदान–खाचा थाच में पहुँचे। जहाँ हमें उस दिन पड़ाव लगाना था। मैदान में पहुँचते ही हमें बड़ा आघात पहुँचा क्योंकि इसके बीचोंबीच सात–आठ बड़े से तम्बू लगे थे, लगभग साठ लोगों का समूह बीच में खड़ा था। इन लोगों के शोरगुल ने हमारी वन्यजीवों और पक्षियों को देखने की तमन्ना पर घड़ों पानी फेर दिया। सौभाग्य से उस दिन इन लोगों का वहाँ आखिरी पड़ाव था। हमारे वहाँ पहुँचते ही वे लोग आगे की ओर बढ़ गये। तम्बू गाढ़ने के बाद हमारे साथियों ने भोजन बनाना शुरू कर दिया था। इस बीच हम पास बह रहे छोटे से पानी के चश्मे के चारों ओर खिले फूलों को देखने, उनकी फोटो खींचने तथा उन्हें जमा करने निकल पड़े। भेड़–बकरियों का एक झुण्ड वहाँ भी पहुँचा हुआ था। उनके साथ आये गड़रिये ने बताया कि दो दिन पहले एक बघेरे ने उसके दो छोटे कुत्तों और एक बकरी को मार दिया था। अन्य जंगली जानवरों के बारे में पूछे जाने पर गड़रिये ने बताया कि नेपाल से आये कई मजदूर जंगलों में अवैध रूप से फंदे लगाते हैं व जानवर मारते हैं। बुग्यालों में पूरी हरियाली छायी हुई थी। हमारा मन उन ढलानों पर खोजबीन के लिए उकताने लगा।

दोपहर के भोजन के बाद हम नगारू थाच (3600 मीटर) की तरफ निकल पड़े और शाम को ही वापस कैम्प में पहुँचे। अगले दिन प्रातः नाश्ते के बाद तय हुआ कि अगला कैम्प शरण्य के दक्षिण पूर्व स्थित ग्लेशियर के नीचे 'बकर थाच' में लगेगा। वहाँ पहुँचने के लिए कोई भी सुगम मार्ग नहीं था। हमें बताया गया कि भेड़–बकरियों के जाने का पुराना मार्ग जगह–जगह से टूटा हुआ है। हमने पोर्टरों से आग्रह किया कि वे सामान लेकर बकर थाच पर पहुँचे और वहाँ पर तम्बू लगा कर हमारी प्रतीक्षा करें। केसर सिंह और हमने कुछ रोटियाँ बाँधी और खड़ी चट्टानों, बर्फ से ढके नालों और बुग्यालों को पार करते हुए कैम्प हेतु एक लम्बा मार्ग सुनिश्चित किया। हालाँकि हमें थार, भरल और भालू दिखायी देने की उम्मीदें थी, पर कुछ गोबर, पंजों व खुरों के निशानों के अलावा कुछ नहीं दिखायी दिया। इस मार्ग पर कम से कम पच्चीस मोनाल पक्षी जरूर दिखाई दिये, उनकी चहचहाट भरी उड़ानों ने मन मोह लिया था। खड़ी चट्टानों के बीच उग रहे एक अत्यन्त खूबसूरत पौधे *पैरा एक्वीलिजिया* को देखकर "फूलों की घाटी" के लेखक स्माईथी का कथन याद आया, जिसमें उन्होंने इस फूल के लिए लिखा है–

"इतना सुकुमार पौधा, सूखे, कठोरतम चट्टान पर।
ईश्वर ही जानता है यह पौधा यहाँ पर कैसे उगता है।"

आगे बढ़कर हमने एक बुग्याल में वहाँ की वनस्पतियों का विस्तृत सर्वेक्षण किया और दोपहर के भोजन के लिए वृक्ष रेखा के समीप लगे थाच पर उतरे। लगभग दो बजे केसर सिंह हमें अपने गंतव्य की ओर खड़ी चट्टान वाले मार्ग से ले गया। कई जगह पर तो हमारे रोंगटे खड़े हो गये कि अगर पैर फिसल गया तो इस सर्वेक्षण का क्या होगा? जिन्दगी की लालसा तो थी ही क्योंकि हिमालय की कई और उपत्यकाओं को देखने की चाह जो है। किसी तरह चट्टान की तलहटी पर पहुँचे और देखा कि एक जगह खरसू और काँचुला के बीसों बड़े–बड़े वृक्ष औंधे मुँह गिरे पड़े हैं। ध्यान से देखने पर आभास हुआ कि ग्राहण नाले के ऊपरी छोर से विशाल बर्फीले चट्टानों से आये हिमस्खलनों के फलस्वरूप जो आँधी आयी होगी उसी ने इन पेड़ों को उखाड़ा होगा। गिरे हुऐ पेड़ों की टहनियाँ और तनों के भँवर जाल से होकर किसी तरह हम तलहटी पर पहुँचे । तलहटी लगभग दो किलोमीटर तक बर्फ से ढँकी हुई थी, इस बर्फ पर फिसलते हुए हम लोग बकर थाच की ओर बढ़े। बकर थाच के आसपास ग्राहण गाँव के लोग गर्मियों में जड़ी–बूटी इकट्ठा करने आते हैं। एक गुफा के पास हमें बड़ी सी भट्टी मिली। केसर सिंह ने बताया कि यह भट्टी जड़ी – बूटियाँ सुखाने के लिए बनायी गयी है। यह थाच से कुछ दूरी पर दो छोटे नालों का संगम है। यूँ तो यहाँ का जंगल शंकुधारी वनों से भरा है परन्तु रास्ते पर एक छोटे से इकलौते बुरांस के वृक्ष ने एक पल के लिए हमारी सारी थकान दूर कर दी। लगभग पाँच फीट ऊँचा यह वृक्ष गुलाबी फूलों से लदा हुआ था। इस मौसम के लिए ये फूल दुर्लभ थे। हमें उम्मीद थी कि हमारे लोग सुनिश्चित जगह पर तम्बू गाड़े चाय के साथ हमारी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। बड़ी उत्सुकता से हम आगे बढ़े परन्तु पूरा क्षेत्र सुनसान था। एक पत्थर पर बैठकर थोड़ी देर सुस्ताये । इस बीच मंद–मंद बारिश शुरू हो गयी। एक बड़े से पत्थर की आड़ में अपने झोले रखकर पोर्टरों का इन्तज़ार करने लगे। केसर सिंह नाले के साथ ऊपर–नीचे बड़े पत्थरों पर चढ़कर सीटियाँ बजाने लगा कि यदि वे लोग आ रहे होंगे तो हमें देख लेंगे। लगभग पाँच बजे तक हमने उनकी राह देखी फिर कुछ दूर आगे जा कर एक बड़े से रई के वृक्ष के नीचे आग जला कर बैठ गये। केसर सिंह ने बताया की पोर्टरों के आने का एकमात्र रास्ता वहीं से होकर गुजरता है। यदि वो आयेगें तो हमें अवश्य देख लेंगे क्योंकि हमारे पास खाने–पीने और ओढ़ने का कोई सामान नहीं था और खुले में रात गुजारने के लिए हम तैयार नहीं थे । हमारा मन विचलित होने लगा कि क्या किया जाय ? कुछ देर और रुकने के बाद हमने नाले को पार किया और पोर्टरों के आने वाले संभावित रास्ते की ओर बढ़े। परन्तु रास्ते में कहीं भी कोई निशान न मिलने से हम लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वे गलत रास्ते से बकर थाच की ओर बढ़े होंगे और वहाँ न पहुँचने से वापस 'खाचा थाच' या गाँव की ओर चल दिये होंगे।

भूख–प्यास और थकान के बावजूद हमने तेज रफ्तार से वापस ग्राहण जाने का निश्चय किया। लगभग अँधेरा होते–होते हम मनीराम के घर पहुँच गये। इस प्रकार बकर थाच होते हुए अन्य कई थाचों से गुजर कर शरण्य के ऊँचाई वाले स्थानों को जाने की हमारी योजना बीच में ही डगमगा गई। केसर सिंह ने हमें आश्वासन दिया कि वह दूसरे रास्ते (माटी नाला) होते हुए अन्य जगहों को ले जायेगा। अगले दिन हमने शरण्य की निचली घाटियों में फर्न, फूले हुए रिंगाल और अन्य वनस्पतियों के सर्वेक्षण की योजना बनायी। रात्रि विश्राम के लिए कसोल आना पड़ा। शाम तक केसर सिंह सारा सामान लेकर पोर्टरों के साथ कसोल कैम्प पर पहुँचा। बाद में पता चला कि ये लोग खाचा थाच में ही खाना खा कर सो गये और दोपहर देर तक सोये रहे। किसी

ने भी जिम्मेदारी नहीं ली कि समय पर निर्धारित कैम्प वाली जगह पर पहुँचा जाए। एक पोर्टर ने बताया कि वे रात के दस बजे तक हमें ढूँढ़ते रहे।

अगले तीन दिनों तक हमने कसोल के आस–पास के जंगलों, माटी नाले और पार्वती घाटी में सर्वेक्षण किया। एक रात सोने के लिए हम ग्राहण नाले के एक ऊँचे टीले पर बने मचान पर गये। इस मचान से पूरे कनावर शरण्य का विहंगम दृश्य मनोहारी लगता है। हमें ज्ञात हुआ कि इस मचान पर समय बिताने आज तक कोई भी प्रकृति प्रेमी नहीं गया है। हम लोगों ने मचान के आगे हल्की आग जलायी और आस–पास में थार, भालू व घुरड़ों की चर्चा करने लगे। तभी पास से कुछ पत्थरों के गिरने की आवाज सुनाई दी शायद कोई घुरड़ पास के चट्टान से भाग रहा होगा। हमें उसके डरे हुए 'ह्विच–ह्विच' की आवाज सुनाई दी। मचान में रात्रि विश्राम के बाद अगले दिन प्रातः थारों को ढूँढ़ने जिस रास्ते से हम माटी नाला की ऊपरी चोटियों तक आगे गये, वह भी कम रोमाँचकारी नहीं था। खड़ी चट्टान से निचली घाटी तक आ रही पगडंडियों पर पाँच जगह हमें दो–तीन फिट लम्बे काले साँप (*हिमालयन पिट वाइपर*) मिले। माटी नाले के एक टीले पर बैठ कर सामने ग्राहण और ढुँडाह गाँवों, थार, घुरड़, कस्तूरी जुजुराना, मोनाल आदि दुर्लभ जानवरों तथा इस समूचे घाटी के दीर्घकालीन संरक्षण के बारे में हमारे मन में कई प्रश्न उभरे । कई सुझाव मन में आये जिनका वर्णन अलग से किया जायेगा। परन्तु सच्चाई यह है कि जब तक स्थानीय लोगों के मन में इस शरण्य को अपना समझ कर इसका रख रखाव करने की भावना नहीं आयेगी और इनकी आजीविका, संबधी मजबूरियाँ नहीं बदलेंगी, इस शरण्य का प्रबंधन चुनौतीपूर्ण ही रहेगा ।

वन्यजीव एवं पर्यावरण

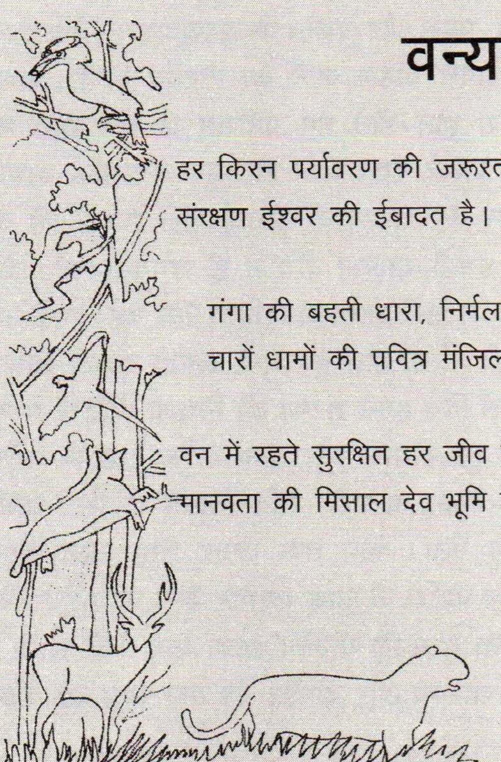

हर किरन पर्यावरण की जरूरत है
संरक्षण ईश्वर की ईबादत है।

गंगा की बहती धारा, निर्मल है
चारों धामों की पवित्र मंजिल है।

वन में रहते सुरक्षित हर जीव हैं
मानवता की मिसाल देव भूमि है।

काश यूँ ही हमेशा ऐसा चलता रहे
उत्तराँचल नवयुग का दर्पण चमकता रहे।

हर किसी को कदम मिला के साथ चलना है
वन्यजीव एवं पर्यावरण को सुरक्षित रखना है।

अपनी आशायें जन–जन तक पहुँचाना है।
वन्य जीवन मानव का हिस्सा इसको हमें बचाना है।

किरन भारती
सेवला कलां,
पो. ऑ. मोहब्बेवाला,
देहरादून

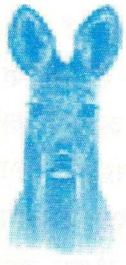

वन्यजीव–ऐतिहासिक परिवेश में

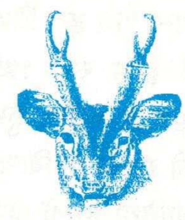

मदन सिंह राणा एवं शशिबाला उनियाल

भा.व.सं., देहरादून

पुराणों में कई जीवजन्तु पक्षी आदि ईश्वर के वाहन के रूप में पूजे जाते थे। जैसे शिव के लिये नंदी बैल, देवी दुर्गा के लिये शेर, सरस्वती के लिये हंस, गणेश जी के लिये चूहा इत्यादि।

वन्यजीव, प्रकृति की ऐसी देन है जिसके लिये हम सदैव उसके आभारी रहेंगे। मनुष्य, जिसका जन्म ही इस प्रकृति की गोद में हुआ है, जैसे–जैसे बाल्यकाल से उसने अपना आकार बढ़ाना शुरू किया वह प्रकृति की सम्पदा से अछूता नहीं रह पाया है । जन्म लेते ही मनुष्य ने जब अपनी आँखें खोलीं तो उसने अपने समक्ष, चारों तरफ फैला आकाश, पेड़–पौधे व जीव–जन्तुओं को पाया और इन्हीं के साथ पल–बढ़ कर उसने अपने सबसे करीबी मित्र के रूप में प्रकृति को अनुभव किया । मनुष्य ने कई प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं का जोरदार मुकाबला किया परन्तु वृक्षों एवं जीव जन्तुओं ने भी मनुष्य का साथ नहीं छोड़ा । मनुष्य ने जब सभ्यता की दहलीज पर कदम रखा और उसने शर्म को महसूस करना सीखा, तब इन्हीं वृक्षों की छाल को वस्त्रों के रूप में धारण किया। जब शरण की आवश्यकता हुई तो इन्हीं वृक्षों ने उसे झोपड़ियों और गृह निर्माण के साधन प्रदान किये। प्रकृति ने एक माँ की तरह उसकी क्षुधा को शान्त करने के लिये मीठे फल प्रदान किये, इसी तरह प्रकृति की भेंट का सहारा हर पल मनुष्य ने लिया है, परन्तु क्या मनुष्य ने भी प्रकृति के इन उपकारों का बदला दिया है? नहीं, क्योंकि इसका सबसे बड़ा प्रमाण आज का प्रदूषित पर्यावरण है। जिसका सबसे बड़ा कारण मनुष्य का स्वार्थी स्वभाव व लगातार हस्तक्षेप है जिसके फलस्वरूप हम आज इस प्राकृतिक वनसम्पदा व जीव जन्तुओं से दूर होते जा रहे हैं । जीव जन्तुओं में वनराज शेर, चीता, शक्तिशाली गजराज, हिरन एवं पक्षियों में तोता, राजहंस, मोर व अन्य अनेक पक्षी हमारे देश का गौरव रहे हैं । यह माना जाता है कि हमारे देश में 500 स्तनधारी जन्तु, 2000 विभिन्न प्रकार के पक्षी, कई प्रकार के कीट व रेंगने वाले जन्तु हैं । आज इन जीव–जन्तुओं का भविष्य खतरे में आ गया है, जिससे पर्यावरण संतुलन बिगड़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप आज इन जीव–जन्तुओं की संख्या आधी रह गयी है। इनमें से कई तो बिल्कुल समाप्ति की कगार पर पहुँच गये हैं जैसे – कस्तूरी मृग, शेर, हाथी, चीता, जंगली भैंस इत्यादि । आसाम के गैंडों को समाप्त होने से बचाने के लिए कई कदम उठाये जा रहे हैं। काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान में आज इनकी संख्या फिर बढ़ गयी है। इसी तरह शेर की प्रजातियाँ जो कि 1830 के दशक में उत्तरी भारत तथा मध्य भारत में पाई जाती थी। वह इन स्थानों से पूरी तरह समाप्त होकर केवल सौराष्ट्र (गुजरात) के गिर वनों तक सीमित हो गई। सन् 1913 में यह एक समस्या ही बन गयी थी इसके निराकरण के लिये भरसक प्रयास किये गये। गुजरात में इनकी जनगणना करायी गयी तो पाया गया कि इनकी संख्या 1936 में 287 हो गयी थी जो कि 1913 में 100 दर्ज की गयी थी। सन् 1936–1946 तक फिर इनकी संख्या घट गयी

परन्तु फिर इस दिशा में की गयी सकारात्मक कार्यवाही के द्वारा सन् 1950–1956 में फिर इनकी संख्या 290 हो गयी। कुछ पक्षी जैसे ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड की संख्या तो बिल्कुल घट गयी क्योंकि कई आदिवासी जातियाँ इनके अण्डे नष्ट कर देती हैं। अगर मनुष्य की यह विनाशलीला इसी तरह चलती रही तो हमें इन सभी प्राकृतिक सम्पदाओं से वंचित होना पड़ेगा जिनका कि ऐतिहासिक महत्व है और जो हमारे पौराणिक ग्रन्थों में भी बहुत महत्वपूर्ण माने गये हैं।

वन्यजीवों का ऐतिहासिक विवरण :– भारतीय वन्य संपदा की महत्ता बहुत प्राचीन है। आदिकाल से ही मनुष्य ने हर युग में इसका उपयोग अपने जीवन में किया है, जिसका प्रमाण हमारे आदि ग्रन्थ हैं । वन्य संपदा की महत्ता का विवरण विभिन्न चरणों में मिलता है । वैदिक युग को इसके लिये स्वर्णिम युग माना जाता है परन्तु तब से आज की स्थिति चिन्ताजनक है ।

वैदिक युग :– मनुष्य ने पौराणिक कथाओं में, प्राचीन कलाओं में, साहित्यों व लोक–कथाओं में वन्यजीवों को माध्यम बना कर इनका आनन्द उठाया है। इतिहास गवाह है कि मूर्तिकारों ने भी वन्यजीवों को अपनी कला के माध्यम से प्रस्तुत किया है । हमारे देश की संस्कृति ने "अहिंसा परमो धर्मः" के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है। कौटिल्य द्वारा लिखित अर्थशास्त्र में भी वन्यजीव संरक्षण सम्बन्धी बाधाओं को दूर करने के लिए दिये गये तर्क इसके साक्ष्य दर्शाते हैं । उस समय कई वनों को अभ्यारण्य घोषित किया गया था जिसे हम अब राष्ट्रीय उद्यान व अभ्यारण्य की संज्ञा देते हैं । कई स्थानों पर वन्यजीवों के मारे जाने व वृक्षों के कटान पर भारी मात्रा में दण्ड का भी उल्लेख किया गया है। वैदिक काल में वन्यजीवन की सुरक्षा हेतु कई आश्रमों का उल्लेख हैं, जहाँ पर हमारी प्राचीन संस्कृति का जन्म हुआ। यहाँ पर जीवों की हत्या को महापाप माना जाता था तथा उनकी रक्षा पर विशेष बल दिया जाता था और पशु पक्षी भी इन स्थानों पर स्वच्छन्द विचरण करते थे । हमारे पौराणिक ग्रन्थ रामायण में एक वानर (हनुमान) का उल्लेख है जो कि एक बुद्धिमान जीव माने गये। बाज (जटायु) जिन्होंने अपने प्राण देकर श्रीराम तक सीता का संदेश पहुँचाया। रीछ (जामवन्त) आदि ऐसे चरित्र थे जिनका वर्णन इस ग्रन्थ में किया गया है। कई जीव–जन्तु ईश्वर के अवतार माने गये हैं जैसे–मीन (मछली), कूर्म (कछुवा), वराह (सूअर), नरसिंह (मुख शेर, धड़ मनुष्य) आदि, इन सभी वन्यजीवों का प्राचीन युग में महत्वपूर्ण स्थान था। पुराणों में कई जीवजन्तु पक्षी आदि ईश्वर के वाहन के रूप में पूजे जाते थे। जैसे शिव के लिये नंदी बैल, देवी दुर्गा के लिये शेर, सरस्वती के लिये हंस, गणेश जी के लिये चूहा इत्यादि। वन्यजीवों का उल्लेख पुराने कवियों, लेखकों ने अपने ग्रन्थों में किया है उदाहरण के लिये पंचतंत्र की कहानियाँ, हितोपदेश आदि । अतः संक्षेप में हम कह सकते है कि प्राचीन भारत में वन्यजीव संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया तथा इनको ऐसे प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया ताकि ये हमारी संस्कृति से जुड़े रहे। हालाँकि प्रमाण इसके संरक्षण को प्रस्तुत कर रहे हैं, परन्तु वन्यजीवों की हत्या पर भी पूरी तरह अंकुश नहीं था, जो जीव–जन्तु फसलों को नुकसान पहुँचाते थे व हानिकारक थे उन्हें नष्ट कर दिया जाता था। राजा–महाराजा भी जीवों का शिकार केवल अपने शौक के लिये करते थे, अंधाधुन्ध नहीं ।

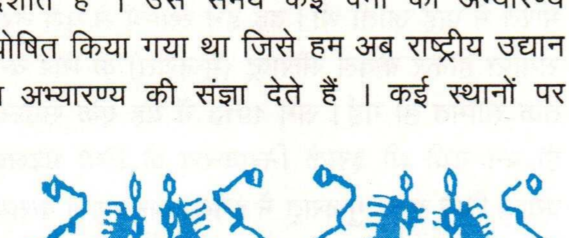

हिन्दु युग:– वैदिक युग के बाद धीरे–धीरे परिस्थितियों में परिवर्तन आने लगा । हालाँकि जैन धर्म व बौद्ध

धर्म के प्रारम्भिक काल में पशु–पक्षियों को धार्मिक महत्ता दी गयी पर जैसे–जैसे सभ्यता का विकास हुआ मनुष्य को भी कृषि के लिये भूमि की आवश्यकता हुई और इसके साथ ही कुछ वन्यजीवों की संख्या का भी ह्रास हुआ। इस क्षति को रोकने के लिए ईसा पूर्व तृतीय शताब्दी में राजा अशोक ने इसके लिए सराहनीय प्रयास किये जिसके अन्तर्गत् पाषाण शिलाओं पर पक्षियों एवं मछलियों की एक सूची तैयार करवाई, जो कि संरक्षण का प्रमाण प्रस्तुत करती है।

मुगल युगः–सन् 1526 से 1707 तक मुगल शासन काल में वन्यजीवों से सम्बन्धित कई महत्वपूर्ण सूचनायें मिली हैं, मुगल शासक शिकार के बहुत शौकीन थे। परन्तु साथ ही साथ प्रकृति के प्रति अथाह प्रेम रखते थे और उन्होंने इसके संरक्षण के लिये भी विशेष रुचि दिखायी। मुगल शासकों ने शिकार के लिये एक शिकारखाने का निर्माण किया जिसका उद्देश्य मनोरंजन था। परन्तु वहाँ पर जीव जन्तुओं व पक्षियों को प्रशिक्षण भी दिया जाता था। बाज इत्यादि के युद्ध से ये मुगल शासक अपना मनोरंजन करते थे ।

ब्रिटिश युगः– इस काल में वन्यजीव बहुतायत में थे। बाद में भूमि उपयोग व वनों के कटाव के कारण इनकी संख्या में कुछ कमी आयी । यह क्षतिकरण उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य शस्त्रों की मात्रा में वृद्धि होने के कारण कुछ बढ़ा और सैन्य अधिकारियों व कुछ अँग्रेजों ने भारी मात्रा में शिकार करना प्रारम्भ कर दिया। कई आँकड़े इसकी प्रामाणिकता सिद्ध करते हैं। उदाहरण के लिये काठियावाड़ में एक अधिकारी ने दस दिनों मे 80 शेरों का शिकार किया व एक महाराजा ने 616 चीतों का शिकार अपने पूरे जीवनकाल में किया। कश्मीर में एक शिकारी द्वारा सन् 1907 से 1919 तक लगभग 4590 पक्षी प्रति वर्ष मारे गये ।

द्वितीय विश्व युद्ध और उसके बाद :– युद्ध के समय जीव जन्तुओं का भारी मात्रा में क्षय हुआ । स्वतन्त्रता के बाद खाद्य पूर्ति को प्राथमिकता दी गई और फिर शुरू हुआ वनों का काटा जाना ताकि खेती के लिए भूमि प्रदान की जा सके तथा फसलों को नष्ट करने वाले जीव जन्तुओं को समाप्त करने के लिये नये–नये उपकरणों की खोज हुई। सामान्यतः फसल संरक्षण गन (बंदूक) इस कार्य के लिए प्रयुक्त की गयी और इस मुहिम के घेरे में वन्यजीव जैसे– हिरन व अन्य जीवजन्तु भी आ गये ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कृषि के विस्तार के लिये सरकार ने कदम उठाये और भारी मात्रा में गन लाइसेन्स प्रदान किये गये। इससे एक नई तरह की अमानवीयता का जन्म हुआ और शिकार को मान्यता प्राप्त हो गयी। अब शिकार मनोरंजन के लिए न होकर आर्थिक समस्याओं से उबरने के लिए किया जाने लगा । कहने का तात्पर्य यह है कि वन्यजीवों के संहार के लिए मायने बदल गये परन्तु स्थिति वही रही और इसकी आड़ में कई लोगों ने अवैधानिक रूप से जीव–जन्तुओं का शिकार भी शुरू कर दिया । इस स्थिति से निपटने के लिये सरकार ने वन्यजीव संरक्षण के लिये कई कारगर कदम उठाये। वन्यजीव मंडल व वन्यजीव संरक्षण सोसायटी की स्थापना की गयी । सन् 1972 में वन्यजीव संरक्षण नियम प्रतिपादित हुआ, जिसके अन्तर्गत् वन्यजीव शिकार को दण्डनीय अपराध माना गया ताकि इन जीवों का संरक्षण किया जा सके। परन्तु इन प्रयासों से भी ज्यादा महत्वपूर्ण प्रयास है–मनुष्य की आत्मचेतना। जिस दिन मनुष्य में इन प्रयासों के लिए सच्ची चेतना का जन्म होगा, उसी दिन ये प्रयास फलीभूत होंगे और तभी हम सही मायनों में इस प्राकृतिक धरोहर का संरक्षण आने वाली पीढ़ियों के लिये कर सकेंगे।

लुप्त होता पारम्परिक ज्ञान

संजय कुमार उनियाल
भा.व.सं., देहरादून

भारतीय ग्रामवासियों का जीवन, वन एवं खेती से अटूट रूप से जुड़ा है। प्रकृति के इतना करीब होने के कारण ये वनों व वन्यजीवों के कई छिपे पहलुओं को जानते व समझते हैं। जहाँ वैज्ञानिक अब इसका महत्व समझ कर इनके पारम्परिक ज्ञान को संरक्षित करने की कोशिश में लगे हैं। वहीं अब दुर्भाग्यवश ग्रामवासी अपनी इस अनमोल धरोहर को खोते जा रहे हैं। इसका एक बड़ा उदाहरण है लुप्त होती पारम्परिक खेती की तकनीकें व स्थानीय प्रजातियाँ। इनकी जगह ली है तथाकथित आधुनिक व ज्यादा उपज देने वाली अनाज की प्रजातियों ने और लोगों के व्यावसायिक फसलों के प्रति बढ़ते रुझान ने। हाल ही में स्पेन में सम्पन्न हुई एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी में एक साथ बोने की वकालत की गई थी। अगर हम जरा सा मुड़ कर देखें तो पाते हैं कि गढ़वाल हिमालय के गाँवों में भी बारानाज खेती प्रसिद्ध थी (बारानाज जैसा कि नाम से प्रतीत होता है इस परम्परागत खेती में एक ही खेत में बारह फसलों के बीज बोए जाते थे।) इससे मृदा संरक्षण में मदद मिलती थी क्योंकि इन फसलों की जमीनी खुराक व पकने का समय अलग–अलग होता था। यह तकनीक हमारी होते हुए भी हमसे दूर हो रही है। अब खेतों में ज्यादा पैदावार देने वाली एकाकी फसलों का ज़ोर है। ये फसलें बीमारी व कीड़ों के प्रति अति संवेदनशील होती हैं और एक ही बार में सारी की सारी फसल नष्ट हो जाती है। ऐसा ही कुछ महाराष्ट्र व आँध्रप्रदेश में कुछ समय पहले देखने को मिला। यहाँ कपास की अधिक पैदावार देने वाली विदेशी प्रजाति को "लीफ कृल वायरस" ने नष्ट कर दिया। आँध्रप्रदेश में तो कई किसानों ने आत्महत्या तक कर ली। याद रहे उस समय हमारा देशी कपास ही काम आया। इसी तरह पहले खेतों में पत्तों व गोबर की खाद का उपयोग खास रूप से होता था। आज इनका स्थान रासायनिक उर्वरकों ने ले लिया है। जिससे मृदा, वायु व जल प्रदूषण बढ़ा है। कीटनाशकों के प्रयोग ने इसमें और भी वृद्धि कर दी है। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने एक बार कहा था "जो राष्ट्र अपनी मृदा को प्रदूषित करता है, वह स्वयं का विनाश करता है।" शायद आज हम यही कर रहे हैं। उत्तरी बंगाल के माल्दा इलाके में अत्यधिक कीटनाशकों के प्रयोग ने पक्षियों व अन्य वन्यजीवों पर विपरीत प्रभाव डाला है। लेटिन अमेरिकी देशों में खेतों में काम करने वाले 10–30% किसानों को कीटनाशकों की वजह से रोगग्रस्त पाया गया। ज्ञात रहे कि ज्यादातर कीटनाशकों का केवल 10–15% भाग ही उपयोग में आ पाता है, बाकी वातावरण को प्रदूषित करता है। इसको रोकने की दिशा में कदम उठाने होंगे और लोगों को ज्यादा जागरूक करना होगा। डी0डी0टी0 के उपयोग पर पाबंदी इस दिशा में एक कदम है। खेती की तकनीकों के साथ–साथ हमारे पारम्परिक बीजों का भी अपना महत्व है। गढ़वाल हिमालय में ही अनाजों की कई ऐसी जातियाँ है, जो बहुत लाभकारी हैं। थापचीनी (लम्बी, अच्छी पैदावार देने वाली), नाग्नी बासमती (लाल फल वाली), चौरी (ऊँचाई वाले गाँवों के लिए लाभप्रद), बनगई (काले तने वाली)। ये अच्छी उपज देने के साथ–साथ स्थानीय जलवायु के भी अनुकूल थी। ये जातियाँ भोजन के अलावा 25%

के लिए चारा भी प्रदान करती थीं। अब ये जातियाँ यहाँ से लुप्त हो रहीं हैं। आजकल बोई जाने वाली अनाज की किस्में पर्याप्त चारा प्रदान नहीं करती। फलस्वरूप चारे की आपूर्ति के लिए जंगलों पर दबाव बढ़ा है। भारत में फसली पौधों की कई किस्में हैं। वैज्ञानिकों ने उड़ीसा के कोरपुर जिले से चावल की लगभग 1500 किस्मों का आँकलन किया है। ये किस्में भी जैव विविधता का एक अंग है, जिन्हें हम खोते जा रहे हैं। "फूड एवं एग्रीकल्चर ऑर्गनाइजेशन" (F.A.O.) के अनुसार, हम अब तक 57% खाद्य पौधों की विभिन्न किस्मों को खो चुके हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में देखें तो हम पाते हैं कि सिर्फ जैवविविधता ही खतरे में नहीं है, बल्कि हमारा पारम्परिक ज्ञान भी तेजी से लुप्त हो रहा है। आज जरूरत है वैज्ञानिक तौर पर इन जातियों व पारम्परिक ज्ञान के उपयोग व संरक्षण की ताकि हम अपने भविष्य को सुरक्षित रख सकें।

करो जीव संरक्षण

ईश्वर की इस सृष्टि में प्राणी कई विचित्र
कुछ मानव के शत्रु हैं कुछ मानव के मित्र

जलचर, थलचर, नभचर आदि कई प्रजातियाँ होती हैं
सबका बड़ा महत्व सृष्टि में, सब की महिमा होती है

कई तो हैं बहुतायत में, कुछ हो रहीं विलुप्त
कुछ सामने दिखती हैं और कुछ एक अब तक गुप्त

एक जमाने में होते थे, बड़े डायनासौर
लुप्त हो गई यह प्रजाति, बचे नहीं कुछ और

ऐसे संकटग्रस्त जीव को हमें बचाना है
मानव हैं हम मानव का कर्त्तव्य निभाना है

सुरेश कुमार
भा.व.सं., देहरादून

आत्मकथ्यः एक मौन मित्र का

अंजली अवस्थी
भा.व.सं., देहरादून

ये बुग्याल अप्रैल माह से सितंबर तक रंगबिरंगे पुष्पों, हरी भरी घास एवं कल–कल करती जलधाराओं से सज जाते हैं और छः मास के लिये बर्फ की रजाई ओढ़कर सो जाते हैं।

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में जिस स्थावर को स्वयं का स्वरूप बतलाया, वह "हिमालय" मैं ही हूँ, जिसको कविराज कालिदास ने "हिमालयो नामः नगाधिराजः" कह कर सर्वोच्च स्थान दिया, वह "हिमालय" मैं ही हूँ। यूँ तो मेरा वर्णन, मेरी कहानी सभी ने काव्यों, ग्रंथों तथा पौराणिक गाथाओं में सुनी व पढ़ी होगी, परन्तु आज मैं स्वयं आपको अपनी कथा सुनाता हूँ।

मेरा जन्म लगभग चालीस लाख वर्ष पूर्व, गोंडवाना लैंड व लॉरेशिया के मिलन के फलस्वरुप हुआ, तब लहरों से खेलते टेथिस सागर ने हिमाच्छादित चोटियों का रूप लिया। आज भी मेरी ऊँचाईयों में समुद्री जीवों के अवशेष प्राप्त होते रहते हैं। हिमाच्छादित स्वरूप ने मुझे नाम दिया "हिमालय" अर्थात् "हिम का घर" मेरा शीश जहाँ "ऐवरेस्ट" या "सागरमाथा" के रुप में चमकता है, वहीं मेरे पग शिवालिक की घाटियों को छूते है । पूर्व से पश्चिम तक लगभग ढाई हजार वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ मैं अपनी जननी भारत भूमि का मुकुट बनकर खड़ा हुआ हूँ।

मैंने अपने जीवन में प्राकृतिक एवं भूगर्भीय हलचलों के कई चक्र देखे व सहे हैं। इनमें उत्पन्न परिवर्तनों ने मेरी संरचना एवं विकास में बहुत योगदान दिया। मेरे शरीर के अतिसंवेदनशील हिस्सों "मेन बाउंड्री थ्रस्ट" व "मेन सेंट्रल थ्रस्ट" ने मुझे "लैसर" से "ग्रेटर" व "ग्रेटर" से "ट्रांस" हिमालय में विभाजित कर दिया है। इन हिस्सों में भूगर्भीय प्रक्रियाऐं निरंतर गतिशील रहती हैं। इनके अलावा मेरा कवच बनकर खड़े ये हरे–भरे वन मेरा अटूट हिस्सा है। इन वनों ने भी समय के साथ अपना रूप बदला हैं।

सदियों पूर्व (लोअर मायोसीन) मेरे दक्षिणवर्त्ती ढाल ट्रॉपिकल (उष्ण कटिबंधीय) वनों से ढके हुए थे। मिड मायोसीन में मेरे विस्तार एवं ऊँचाई के अनुरूप वनों का विकास हुआ। कम ऊँचाई के क्षेत्रों में 'ग्लूटा, 'बरसेरा'' 'ऐनीसोप्टेरा' तथा 'डिप्टेरोकार्प्स' आदि वृक्षों की जातियों का वर्चस्व था। जबकि ज्यादा ऊँचाई वाले स्थानों में 'चीड़' 'रई' 'मुरण्ड' तथा 'भोज' आदि वृक्षों की प्रधानता थी। भूगर्भीय समय–सारणी के अनुसार 'प्लायोसीन' में इन वनों के संरचना में अनेक परिवर्तन हुए। ' डिप्टेरोकार्प्स' व 'ऐनीसोप्टेरा' जाति के वृक्ष पश्चिमी हिमालय से विलुप्त हो गए तथा 'देवदार' के वृक्ष मेरे श्रृंगार हेतु आए। मेरे अत्यधिक ऊँचाई पर पाए जाने वाल घास के मैदान, जिन्हें बुग्याल कहते हैं "प्लिस्टोसीन ग्लेशियेशन" की देन हैं। ये बुग्याल अप्रैल माह से सितंबर तक रंगबिरंगे पुष्पों, हरी भरी घास एवं कल–कल करती जलधाराओं से सज जाते हैं और छः मास के लिये बर्फ की रजाई ओढ़कर सो जाते हैं।

इन वनों व बुग्यालों ने न केवल मुझे हरित आवरण पहनाया है, अपितु विभिन्न जीव–जन्तुओं को भी आसरा दिया है। इन वनों के विकास एवं विस्तार के साथ–साथ वन्यजीवों का भी विकास एवं विस्तार हुआ। आज मेरी गोद में जो वन्यजीव कुलाँचे भरते हैं उनमें कस्तूरी मृग, घुरड़, भरल, काकड़, सांभर, हिमतेन्दुआ, और बाघ आदि प्रमुख हैं। जहाँ एक तरफ घुरड़, काकड़ आदि निचले वन क्षेत्रों में पाए जाते है। वहीं दूसरी तरफ ऊँचाई वाले भोज एवं सिमरू के वनों व बुग्यालों में कस्तूरी मृग, भरल, आदि मिलते है। मोनाल, कलीज, जंगली मुर्गी, हिम कबूतर, च्यूली आदि की चहचहाट मेरी खामोशी को भी संगीतमय बना देती है। वनों एवं वन्यजीवों के अतिरिक्त मैं मानव की उत्पत्ति एवं विकास का भी साक्षी रहा हूँ। मैंने अनेक संस्कृतियों एवं सभ्यताओं को अपने में संजोया है। चाहे वे लद्दाख के 'चांगपा' हो या हिमाचल व उत्तराँचल के वासी। चाहे वो घुमक्कड़ गुज्जर जनजाति के लोग हों या भेड़–बकरी पालने वाले गद्दी, मैंने सबको एक सा स्नेह दिया है। उत्तरपूर्वी क्षेत्रों के घने जंगलों में बसने वाले जनजातीय लोग भी मेरे स्पर्श व स्नेह से अछूते नहीं रहे हैं। आदिकाल से ही मानव ने मेरी गोद में संरक्षण पाया है। मेरे संसर्ग में रहने वाले लोगों का जीवनयापन मुख्यतया कृषि एवं पशुपालन द्वारा होता रहा हैं। मेरी निचली घाटियों व समतल ढालों में लहराते खेत मेरे सौंदर्य को दुगुना करते रहे हैं। अपने जीवनयापन के लिए आवश्यक अनेक वस्तुओं के लिए मानव सदा से ही मुझ पर निर्भर रहा है। इमारती व जलाऊ लकड़ी, चारापत्ती, फल, फूल खनिज, रत्न एवं जड़ी–बूटी आदि मानव ने मुझसे निःसंकोच प्राप्त किए हैं। मेरी कोख से उत्पन्न प्रमुख नदियाँ 'गंगा' व 'यमुना' संपूर्ण भारतवर्ष की प्यास बुझाती हैं। इसके अतिरिक्त मैं सदा से ही भारत भूमि का अडिग प्रहरी रहा हूँ। समय पर मानसून लाने व तूफानी ठण्डी हवाओं को रोकने का उत्तरदायित्व मैं पूरी निष्ठा से निभाता आया हूँ। साथ ही साथ मैंने भारत की सीमाओं को भी दुश्मन की नज़र से सुरक्षित रखने का बीड़ा उठाया है।

"महार्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्"
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः।।

जब देश–विदेश के पर्यटक मुझसे मिलने आते हैं तो मुझे अत्यंत हर्ष होता है। मैं रंग बिरंगे पुष्पों, हिमाच्छादित शिखरों, लहलहाते वृक्षों, कल–कल करती जलधाराओं एवं शीतल, मादक पवन से उनका स्वागत करता हूँ। ज़िन्दगी की दौड़–भाग से थके हुए पथिकों को मैं नवजीवन व स्फूर्ति देता हूँ। मेरे एकाकीपन को बाँटने आए तपस्वियों, चरवाहों एवं पर्यटकों का मैं सदा से ही आभारी रहा हूँ, परन्तु यही मानव जब आधुनिकता एवं व्यापारिकता की दौड़ में मुझे अपने प्रहारों से प्रताड़ित करते हैं, तो मुझे बहुत क्रोध आता है। निरंतर बढ़ते शहरीकरण, रेंगती सड़कों, विस्फोटों, खनन, प्रदूषण तथा बदलते भूमि उपयोग ने मेरी उत्तरजीविता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। मानव की अनगिनत चोटों ने मेरे शरीर पर जगह–जगह घाव बना दिए हैं। ये घाव भू–स्खलन के रुप में रिस रहे हैं। लालची मानव की भूख से कटते वनों व उजड़ते बुग्यालों ने मेरे हरित वस्त्रों को तार–तार कर दिया है। उधड़े हुए वस्त्रों से मृदाक्षरण निरंतर नदियों की सतह को बढ़ा रहा है। बढ़ते तापमान व गर्म हवाओं से मेरे हिमकेश पिघल रहे हैं, जलस्त्रोत सूख रहे हैं तथा विदेशी जातियों के पौधे जैसे लैंटाना, यूपेटोरियम आदि फैल रहे हैं।

मानव का ऐसा क्रूर व्यवहार देखकर मैं अत्यंत दुखी एवं पीड़ित हूँ। मैं व्यथित हूँ कि मानव कैसे भूल गया कि मेरी आयु तो मिट्टी, वनों एवं हिमशैलों पर निर्भर है। यही तो मुझे प्राकृतिक विपदाओं से बचाते हैं। यदि यही आवरण नष्ट हो गए तो मैं कहाँ

जीवित रह पाऊँगा और यदि मैं धराशायी हो गया तो क्या मानव जी पायेगा?

मेरी इस पीड़ा एवं व्यथा को मानव समाज के एक प्रबुद्ध वर्ग ने समझना शुरु किया है। इन्होंने मेरी मूक पीड़ा को एक आवाज देकर समाज के सामने उजागर किया हैं। इन्होंने मानव को मेरे विनाश से होने वाले भीषण दुष्परिणामों के प्रति सचेत किया है। इनके अथक प्रयासों से ही आज मेरे कुछ वन क्षेत्रों को 'संरक्षित क्षेत्र' का दर्ज़ा प्राप्त हुआ है। इनमें से कुछ प्रमुख हैं—उत्तर–पूर्व के घने वन, पश्चिम हिमालय में 'फूलों की घाटी' व उत्तर–पश्चिम के ठण्डे रेगिस्तान। इन क्षेत्रों के संरक्षण के साथ ही इनमें रहने वाले वन्यजीवों जैसे कस्तूरी मृग, हिमतेंदुआ आदि को भी संरक्षण प्राप्त हुआ है। जीवनरक्षक जड़ी–बूटियों के व्यापारिक दोहन पर भी प्रतिबन्ध लग चुका है। जगह–जगह वृक्षारोपण किया जा रहा हैं। ये लोग मानव विकास व मेरी उत्तरजीविता के मध्य सामंजस्य हेतु पारम्परिक ज्ञान एवं जीवनशैली को बढ़ावा दे रहे हैं। पर आज जरुरत है, मानव समाज में सहयोग की। आपसी सहयोग से ही मानव मेरे क्षरण को रोक सकता है और मानव द्वारा प्रेषित ये भाव तभी मुझे युगों–युगों तक मानव सेवा की प्रेरणा देते रहेंगे।

उतर कर क्रोड़ से तेरी
जगत कल्याण को तत्पर
सरस जलधार बह आई
हिमालय हम ऋणी तेरे

सम्भालो पर्यावरण

वन से जल और जल से जीवन मानव ने पाया
किन्तु मानव यह बात कभी क्यों समझ नहीं पाया

भूल गया वनों का महत्व और जल का मतलब
वन जलते रहे और उनकी आग बुझा नहीं पाया

होश आया जब खुद की दुनिया उजड़ती देखी
अब सोचता है कि उसने क्या खोया क्या पाया

अब भी वक्त है गर सम्भल सकता है तो सँभाल अपने को
वक्त गया तो फिर किसी के हाथ नहीं आया

राम कुमार चोटिला
भा.व.सं., देहरादून

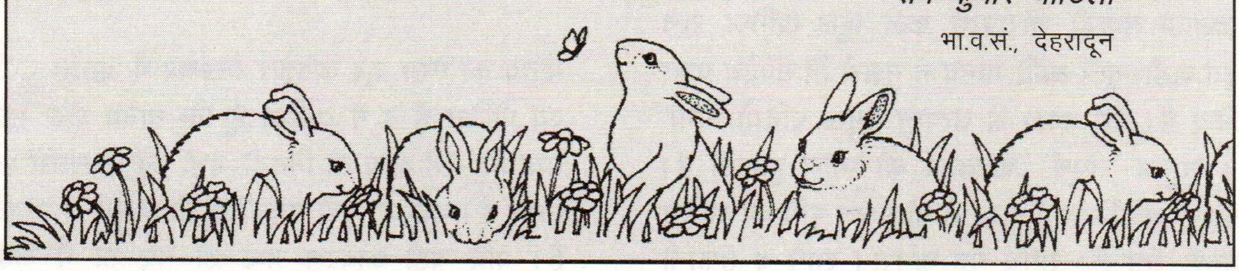

वृक्षों की धार्मिक व औषधीय उपयोगिता

शशिबाला उनियाल
भा.व.सं., देहरादून

पेड़–पौधों का न केवल प्राकृतिक सौन्दर्य होता है वरन् उनका अपना औषधीय महत्व भी है। ये बड़े ही दुख की बात है कि आज हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में उल्लिखित औषधियों व आयुर्वेदिक गुणों वाली वन सम्पदा को हम भूल गये हैं। ऐसे कई पौधे व वृक्ष हैं, जो रोगों के निदान के लिये रामबाण सिद्ध हुये हैं।

वृक्षों व पेड़–पौधों का मनुष्य के जीवन से अटूट रिश्ता रहा है तथा आध्यात्मिक रूप से तो उनका एक विशेष स्थान माना जाता है। पेड़–पौधों का महत्व न केवल आध्यात्मिक रूप में है वरन् उनका अपना वैज्ञानिक महत्व भी है। पेड़ पौधे मनुष्य को शरण, भोजन व सुविधायें प्रदान करते हैं। इन वृक्षों का कोई न कोई अंग मनुष्य की आवश्यकताओं से अवश्य जुड़ा रहता है, ये वृक्ष व पेड़–पौधे कहीं तो मनुष्य की आध्यात्मिक भावनाओं को संतुष्ट करते हैं और कहीं स्वास्थ्य सम्बन्धी जरूरतों को भी पूरा करते हैं। पवित्र वृक्षों की छाया में विश्राम करके तथा ऐसे वातावरण में रहने से ईश्वर में आस्था रखने वाले मनुष्यों के हृदय में स्वाभाविक शान्ति का उद्भव होता है क्योंकि हिन्दू धर्म सदैव से ही पौराणिक ग्रन्थों से जुड़ा रहा है जिसके कारण वह न केवल ऐसे स्थानों को पूजता है बल्कि स्वयं के घर में ऐसे ही पवित्र वृक्षों का होना अनिवार्य मानता है ताकि इन वृक्षों के रूप में स्थित देवी–देवताओं के निवास से घर में सुख शान्ति रहे। कुछ पौराणिक ग्रन्थों में तो वृक्षों की महिमा का गुणगान इस तरह से भी किया गया है।

मूले ब्रह्मा तने विष्णु शाखायम् महेश्वर् ।
पत्रम् सर्व देवानाम् वृक्ष देव नमोस्तु ते ।।

अर्थात् वृक्ष की जड़ में ब्रह्मा, तने में विष्णु, शाखाओं में शिव एवं पत्तों में सभी देवताओं का निवास है इसलिए वृक्ष देव को प्रणाम । इसी तरह तुलसी का पौधा घर की पवित्रता का द्योतक माना गया है तथा इसके महत्व का उल्लेख पदम पुराण में भी किया है ।

भूतले वापि ते मेन हयर्थ तुलसीवनम् ।
कृतं क्रतुशत तेन विधिवत्प्रियदक्षिणम् ।।

अर्थात् पृथ्वी पर जिसने भी हरि की उपासना हेतु तुलसी का वन लगाया है उस प्राणी ने पूर्ण विधि विधान के साथ प्रिय दक्षिणा से समन्वित सौ यज्ञ कर लिये है, तात्पर्य यह है कि सौ यज्ञ के समान उसका पुण्य फल है ।

वृक्षों का महत्व

आज पर्यावरण असंतुलन की स्थिति से निपटने के लिए वृक्षों की महत्ता को समझना अनिवार्य हो गया है। वृक्षों से भूमि संरक्षण, प्रदूषण, वन ह्रास आदि समस्याओं का समाधान हो सकता है । आज मनीप्लांट, बौन्साई व कैक्टस ही केवल हमारे घर की शोभा बढ़ा रहे हैं तथा हम अपने पौराणिक वृक्षों का महत्व लगभग भूलते जा रहे हैं जिन वृक्षों की छत्रछाया में

हमारा जीवन बीता है, आज उनका महत्व केवल किताबों तक ही सीमित रह गया है। मैं अपने लेख के माध्यम से पाठकों का ध्यान उन पवित्र वृक्षों की ओर कराना चाहती हूँ जो कि दुर्भाग्यवश इस भौतिकतावादी युग में लगातार पतन की ओर अग्रसर हो रहे हैं और जिसके फलस्वरूप हमारी सांस्कृतिक छवि भी धूमिल होती जा रही है। यदि मनुष्य ने इन वृक्षों के प्रति आदर व प्रेम को नहीं स्वीकारा तो हम एक ऐसी सीमा पर पहुँच जायेंगे जहाँ से वापसी सम्भव नहीं है ।

इतिहास साक्षी है कि सभ्यता का जन्म इन्हीं जंगलों में हुआ। प्राचीन हिन्दू धर्म भी इन घने जंगलो में नदी के किनारे ही पनपा। औद्योगिक वातावरण से दूर रहकर योग तथा पुराणों को लिखने में अपना समय व्यतीत करने वाले साधु–सन्त और इन्हीं घने वनों में विचरण करते हुये पशु–पक्षियों के कलरवों का उल्लेख इन पुराणों में बड़े ही सुन्दर ढंग से किया गया है। पेड़–पौधों का न केवल प्राकृतिक सौन्दर्य होता है वरन् उनका अपना औषधीय महत्व भी है। ये बड़े ही दुख की बात है कि आज हिन्दू धर्म के ग्रन्थों में उल्लिखित औषधियों व आयुर्वेदिक गुणों वाली वन सम्पदा को हम भूल गये हैं, जैसे सर्पगन्धा जो कि रक्तचाप दूर करने के लिये औषधि रूप में प्रयोग की जाती है और अन्य ऐसे कई पौधे व वृक्ष हैं, जो रोगों के निदान के लिये रामबाण सिद्ध हुये है। औषधीय व पवित्र वृक्षों की लम्बी सूची में सें दस मुख्य वृक्षों का संक्षिप्त आध्यात्मिक व औषधीय महत्व का विवरण इस प्रकार हैः–

1. **कल्पवृक्षः**– इस वृक्ष को कल्पद्रुम, कल्पपादप भी कहा जाता है। अब प्रश्न यह उठता है कि यह वृक्ष पृथ्वी पर कैसे आया तो इस वृक्ष के सम्बन्ध में एक धार्मिक गाथा है, कि यह वृक्ष पहले भगवान इन्द्र की वाटिका ''नन्दनवन'' में स्थित था। कई पौराणिक ग्रन्थों ने तो इसे इच्छाप्राप्ति वृक्ष की संज्ञा दी है । कल्पवृक्ष, समृद्धि व खुशहाली का प्रतीक माना जाता है, ऐसा माना जाता है कि जो मनुष्य इस वृक्ष की सेवा करता है वो अमरत्व तो प्राप्त करता ही है, साथ ही देवी–देवताओं के आशीर्वाद का भी पात्र बन जाता है। पौराणिक कहावत है कि यह वृक्ष समुद्र मन्थन के समय प्रकट हुआ था और देवताओं के हिस्से में आया था तथा देवराज इन्द्र ने इसे अपनी वाटिका में रोपित कर लिया था ।

2. **पारिजातः**– इस वृक्ष का भी हमारे ग्रन्थों में एक विशेष स्थान रहा है। क्षीरसागर का मन्थन करते हुये अपनी सुगन्ध से पूरे वातावरण को सुवासित करने वाला वृक्ष पारिजात ही था । पारिजात का अर्थ है 'समुद्र से उत्पन्न' । इस सम्बन्ध में एक कथा है कि एक बार श्री कृष्ण का स्वागत करते हुये इन्द्र ने रूक्मणी को पारिजात का पुष्प भेंट किया जिसे रूक्मणी ने अपने बालो में सजा लिया, तब द्वारिका वापस आने पर कृष्ण की दूसरी पत्नी सत्यभामा ने कृष्ण को पूरा वृक्ष ही लाने का आग्रह कर दिया। जब कृष्ण ने इन्द्र के समक्ष अपना प्रस्ताव रखा तो इन्द्र ने उसे ठुकरा दिया। तब कृष्ण ने इन्द्र पर चढ़ाई कर दी और पारिजात वृक्ष छीन कर ले आये और द्वारिका में रोपित कर दिया, परन्तु एक दूसरी गाथा के अनुसार पारिजात वृक्ष की छाया तो सत्यभामा कृत महल की तरफ थी व फूल रूक्मणी के महल की तरफ गिरते थे। पारिजात का बाह्य विवरण विशेषतापूर्ण होता है, यह मध्यम आकार का वृक्ष है जिसकी टहनी व पत्ते रोंओं से भरपूर होते हैं व बहुत ही तीखे व कठोर होते हैं परन्तु इस वृक्ष की एक विशेषता होती है कि इस खुरदुरे वृक्ष पर बहुत ही कोमल फूल खिलते हैं।

औषधीय महत्व – इसकी पत्तियों का प्रयोग जोड़ों व साइटिका के दर्द में किया जाता है।

3. **रुद्राक्ष** :– रुद्राक्ष, भगवान शिव के प्रिय मोती माने जाते हैं। ये दाने भगवान शिव की आँखें

माने जाते हैं । रुद्राक्ष कई प्रकार के होते हैं तथा उनकी उपयोगिता का उसमें स्थित खाँचों से आँकलन किया जाता है। एकमुखी रुद्राक्ष बहुत ही महत्वपूर्ण माना जाता है तथा जिसके पास ये रुद्राक्ष होता है, उसे ईश्वरीय वरदान का पात्र माना जाता है । एकमुखी रुद्राक्ष बहुत ही कठिनाई से प्राप्त होता है जबकि पंचमुखी व 14 खाँचों वाला रुद्राक्ष सामान्य माना गया है। एकमुखी रुद्राक्ष जल्दी से प्राप्त नहीं होते है। रुद्राक्ष की माला का उपयोग जप करने में व मन्त्रों को कंठस्थ करने में किया जाता है।

औषधीय महत्व – रुद्राक्ष का उपयोग रक्तचाप दूर करने के लिए होता है। दसमुखी रुद्राक्ष को घिस कर दूध के साथ खाने से पुराना कफ भी हट जाता है । छः मुखी रुद्राक्ष हिस्टीरिया व मिर्गी आदि के रोगों के लिए उपयोगी है। चारमुखी रुद्राक्ष को दूध के साथ बीस दिन तक पीने से मस्तिष्क संबंधी रोग दूर होते हैं। भूत, प्रेत, पिशाच व दुष्ट आत्माओं को वश में करने वाले लोग अर्थात् तांत्रिक भी इसको धारण करते हैं।

4. **पीपलः**– हिन्दू सभ्यता तथा धर्म, घने जंगलों, नदियों के किनारे खूब फली फूली । यह प्राकृतिक स्थान न केवल ज्ञान धर्म के केन्द्र वरन् वैज्ञानिक आधार भी माने जाते है। पीपल जिसे बोधि–वृक्ष भी कहा जाता है, इस पवित्र वृक्ष का अपना मुख्य स्थान है क्योंकि इसमें ब्रह्मा, विष्णु व महेश तीनों का निवास होता है इसी बोधि–वृक्ष के नीचे बैठ कर गौतम बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था। इसकी लकड़ी का उपयोग विवाह, गृहप्रवेश व हवन इत्यादि के लिये किया जाता है।

औषधीय महत्व – पीपल की छाल का उपयोग दर्द निवारण के लिए किया जाता है । इसकी पत्तियों के रस का उपयोग दाँत के दर्द व कीटाणुओं के नाश के लिए किया जाता है। इसके फल पेट की पाचन शक्ति को बढ़ाते हैं।

5. **बरगदः**– पुराने समय से ही बरगद का धार्मिक महत्व रहा है। बौद्ध व हिन्दू धर्मों में इसकी पूजा की जाती है। बरगद का वृक्ष काफी विशालकाय होता है। इस वृक्ष के साथ वट सावित्री पूजन की कथा जुड़ी है कि किस तरह सावित्री ने अपने पति के प्राणों की रक्षा इस वृक्ष की पूजा से की थी और तब से लेकर आज तक वट सावित्री व्रत व पूजन सुहागन हिन्दू स्त्रियाँ करती आ रही हैं। बौद्ध धर्म की कई कथायें भी इस वृक्ष से जुड़ी हैं।

औषधीय महत्व – इसकी छाल का उपयोग डायरिया, पेचिस व मधुमेह आदि रोगों के निवारण के लिए किया जाता है। इसके दूध जैसे चिपचिपे पदार्थ से आमातिसार व पेट के रोगों के निदान में सहायक हैं तथा मुँह के छाले,दाँत का दर्द, अल्सर आदि रोगों के लिए अचूक औषधि है।

6. **बेलः**– इस वृक्ष की पूजा भगवान शंकर को प्रसन्न करने के लिए की जाती है। ये वृक्ष ज्यादातर शिव मंदिर के आसपास लगाया जाता है क्योंकि बेलपत्र भगवान शंकर को बहुत प्रिय हैं। इसके चारों ओर कच्चे सूत का धागा मनोकामना सिद्ध करने हेतु बाँधा जाता है।

औषधीय गुण – बेल से कई औषधियाँ तैयार की जाती हैं। इसका उपयोग पेट के रोगों में जैसे पेचिश, डायरिया में किया जाता है । बेल का गूदा पाचनशक्ति को बढ़ाता है तथा इसकी पत्तियों का रस शहद के साथ खाने से कब्ज व पीलिया आदि की रोकथाम करता है।

7. **अशोकः**– हिन्दुओं के पवित्र वृक्षों में अशोक का अपना स्थान है। पार्वती जी इसी वृक्ष की पूजा करती थीं। इस वृक्ष के संबंध में एक गाथा रामायण से है कि जब रावण ने सीताजी का अपहरण कर लिया था तो इसी वृक्ष के नीचे सीताजी को बंदी बनाकर रखा गया था व सीताजी इसी अशोक वृक्ष के नीचे बैठ कर

पूजा किया करती थी। पंचवटी, पाँच वृक्षों का एक समूह है जो पीपल, बेल, बरगद, आँवला व अशोक से मिलकर बनता है।

औषधीय गुण – इसकी पत्तियाँ पेटदर्द में प्रयोग की जाती हैं व यह पेचिस व पेट संबंधी रोगों का निवारण करती हैं। इसकी छाल का उपयोग बिच्छू के काटने पर किया जाता है।

8. **आमः**– यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण वृक्ष है। इसकी टहनियाँ हवन आदि के काम आती हैं। किसी भी शुभ अवसर पर जैसे गृहप्रवेश, शादी विवाह के अवसर पर इसके पत्ते व लकड़ियों का उपयोग किया जाता है।

औषधीय गुण – इसके सभी भागों का औषधीय महत्व है । इसकी सूखी पत्तियों का पाउडर डायरिया, मधुमेह खत्म करने के काम आता है। पत्तियाँ दाँतों के कीटाणुओं को समाप्त करती हैं तथा इसकी छाल का उपयोग कई रोगों में किया जाता है। इसके फलों से हमें विटामिन ए, बी, सी एवं डी प्राप्त होता है इसका उपयोग दस्तावर, फेफड़ों व आँतों की बीमारियों के निवारण में किया जाता है।

9. **चंदनः**– यह वृक्ष अपनी सुगंध व ठंडक प्रदान करने के कारण विख्यात है। अपनी कविताओं में भी कवियों ने इस वृक्ष की महिमा को गाया है तथा बताया जाता है कि इसकी सुगंध के कारण इस पर साँप लिपटे रहते हैं। इसका महत्व धार्मिक तौर पर बहुत ज्यादा है। चंदन का लेप भगवान शिव को बहुत ही प्रिय है, शिवभक्त शिव की अर्चना करते हुए चंदन का लेप लगाते हैं, शिवभक्त इसी चंदन का उपयोग माथे पर लगाकर ठंडक प्राप्त करते हैं।

औषधीय गुण – इससे कई प्रकार की औषधियाँ प्राप्त की जाती हैं, चंदन, चन्दनावस आदि का उपयोग ठंडक के लिये व अन्य औषधियों के निर्माण में होता है। इसका प्रयोग पेट सम्बन्धी रोग, मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारी, व सिरदर्द के लिये भी किया जाता है।

10. **नीमः**– नीम का वृक्ष अत्यधिक आध्यात्मिक व औषधीय गुणों वाला होता है। इसकी आध्यात्मिक मान्यता बहुत है। इसके विषय में कहा जाता है कि यह शीतला माता, जो छोटी माता की देवी हैं, का निवास स्थान है। नीम की पत्तियों का छोटी माता रोग में उपयोग किया जाता है। चैत मास में स्त्रियाँ बच्चों की रक्षा के लिए शीतला माता की पूजा करती हैं।

औषधीय गुण – नीम औषधीय गुणों की खान है इसका सबसे उपयोगी भाग इसकी छाल है जो कि दातुन के रूप में व पेट संबंधी बीमारियों में उपयोग की जाती है इसकी छाल का उपयोग बुखार, उल्टी, पीलिया व त्वचा संबंधी बीमारियों में कटना – फटना व चोट लगने पर किया जाता है। इसकी गोंद, टानिक का काम करती है। टहनियाँ, दातुन का काम करती हैं तथा दाँतों को कीटाणुरहित बनाती हैं। नीम का उपयोग मूत्र संबंधी बीमारी, बवासीर, पेट के कीड़ों को नष्ट करने में किया जाता है, इसका तेल जानवरों को लगाने के लिए किया जाता है ताकि जानवर कीटाणुरहित हों।

उपरोक्त पवित्र वृक्षों की महत्ता व गुणों का ध्यान में रखते हुए इनके ऐतिहासिक गौरव की रक्षा करनी चाहिए तथा दिन–प्रतिदिन उपेक्षित होती वृक्ष संपदा को होने वाले आघातों से बचाना चाहिए तभी हम पीढ़ी दर पीढ़ी इसका लाभ उठा सकते हैं । जंगलों का पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण योगदान है अतः हमें अधिक से अधिक वृक्ष लगाकर पर्यावरण संतुलन बनाना चाहिये इसीलिये कहा गया है कि

"एक वृक्ष दस पुत्र समान"

विश्व का प्राचीनतम लोकतंत्र

डा0 (श्रीमती) भगवती उनियाल
IV/11, भा.व.सं. आवासीय परिसर, देहरादून

गाँव में मुख्य रूप से अपर और लोअर दो सदन हैं। अपर हाऊस को ज्येष्ठाँग कहते हैं तथा लोअर हाऊस को कोर कहा जाता है। प्रत्येक घर का मुखिया कोर का सदस्य होता है वोट देने का अधिकार केवल इनको ही होता है। ज्येष्ठाँग अथवा अपर हाऊस में ग्यारह सदस्य चुने जाते हैं। इनमें से तीन सदस्य, बड़ा पुजारी नगवाणी वार्ड (चुघ) से चुना जाता है जिसे इस वार्ड के सदस्य ही चुनते हैं।

हिमाचल के कुल्लू जिले में स्थित है एक छोटा सा गाँव भलाणा। ऐसा माना जाता है कि प्राचीन वैदिक काल का संसदीय लोकतंत्र जो धर्म की सुदृढ़ नींव पर आधारित था, आज तक उसी रूप में स्थापित है। भौगोलिक प्रकार से अत्यन्त दुर्गम क्षेत्र में बसे होने के कारण लाखों वर्षों के परिवर्तन, क्रान्ति एवं स्वतंत्रता के आन्दोलनों का भी यहाँ पर प्रभाव नहीं पड़ा है ।

भलाणावासियों ने अपने लोकतंत्र का स्वरूप उसी प्रकार रखा है, जिस प्रकार से इसे ऋग्वैदिक काल के ऋषि जमदग्नि ने स्थापित किया था । जमदग्नि अर्थात् जमलू देवता को ही सर्वोपरि माना जाता है।

भलाणा गाँव दो भागों में बसा हुआ है, जो एक दूसरे से थोड़ी दूरी पर स्थित हैं। एक टोली के लोग दूसरे टोली के लोगों से शादी विवाह करते हैं। यहाँ के लोग कणाशी भाषा बोलते हैं। इसमें विभिन्न भाषाओं के कुछ कुछ शब्द मिलते हैं कोई शब्द लाहुली, किनौरी, निती–माणा की मार्छा, नेपाल की नेवारी, बुशहरी, मुण्दा तथा सिक्किम की लेप्चा भाषा से सम्बन्धित हैं। इतने निराले स्वरूप के कारण यह भाषा अन्य किसी भी भाषा से मेल नहीं खाती है। अन्य लोग भी इनकी भाषा को नहीं समझ पाते हैं।

कुल्लू के लोग इसे देवताओं की भाषा कहते हैं। गाँव के मकानों में पत्थर व लकड़ी का प्रयोग होता है। पूरे गाँव को देवता की सम्पत्ति माना जाता है। इसलिए गाँव का सारा कार्य भी जमलू देवता अर्थात् जमदग्नि के आध्यात्मिक मार्गदर्शन से ही होता है । भलाणा में शासन के अनुरूप गाँव दो भागों में विभाजित है जिसे सोंरा बेद और धारा बेद कहते हैं। इनमें चार वार्ड क्रमशः थम्याणी, नगवाणी, दुराणी और पलचाणी हैं। गाँव में मुख्य रूप से अपर और लोअर दो सदन हैं। अपर हाऊस को ज्येष्ठाँग कहते हैं तथा लोअर हाऊस को कोर कहा जाता है। प्रत्येक घर का मुखिया कोर का सदस्य होता है वोट देने का अधिकार केवल इनको ही होता है कोर के सदस्यों की संख्या सत्तर–अस्सी तक होती है । ज्येष्ठाँग अथवा अपर हाऊस में ग्यारह सदस्य चुने जाते हैं । इनमें से तीन सदस्य, बड़ा पुजारी नगवाणी वार्ड (चुघ) से चुना जाता है जिसे इस वार्ड के सदस्य ही चुनते हैं। देवता के बाद शासन में यही बड़ा अधिकारी होता है। दूसरा सदस्य कर्मिष्ठ यानि

खजाने का मैनेजर है जो कि थम्याणी वार्ड से चुना जाता है तथा तीसरा सदस्य गूर है जो दुराणी या पलचाणी किसी भी वार्ड में से चुना जाता है । इन तीनों प्रतिनिधियों को जीवन में एक बार चुना जाता है तथा वे तब तक इस पद पर बने रहते हैं जब तक कि दोनों सभाओं की मर्जी होती है। अपर हाऊस के शेष आठ सदस्यों का चुनाव विभिन्न वार्डों से किया जाता है इनका कार्यकाल पाँच वर्ष का होता है। साधारणतया इनका चुनाव निर्विरोध होता है – परन्तु उम्मीदवारों को आपस में मुकाबला करने की छूट रहती है। अपर हाऊस के इन आठ सदस्यों में से यदि कोई एक त्यागपत्र देता है या निकाला जाता है तो शेष अन्य सात सदस्य भी सेवानिवृत्त किये जाते हैं। अपर हाऊस के ग्यारह सदस्यों में से आठ सदस्य अपने चबूतरे से नीचे उतर जाते हैं । इस समय वहाँ पर केवल तीन स्थायी सदस्य ही रह जाते हैं। आठ सदस्यों के स्थान पर तुरन्त ही नये सदस्यों को चुना जाता है। यह कार्य वही लोअर हाऊस के सामने ही किया जाता है तथा लोअर हाऊस ही इनका चुनाव करता है। जिसको बड़ा पुजारी फिर से हाथ पकड़कर अपने चबूतरे पर ले जाता है। इसी समय सभा का एक सदस्य बकरे के खून से सना दराट नवनिर्वाचित सदस्यों के सामने बारी–बारी से पेश करता है। इस खून से ज्येष्ठाँग के सभी सदस्य अपने माथे में टीका लगाते हैं और एक साथ शपथ लेते हैं कि वे अपने जनपद के प्रति वफादार रहेंगे तथा अपने उत्तरदायित्वों को निष्ठापूर्वक निभायेंगे। शपथ ग्रहण करने के पश्चात् ये अपर हाऊस के सदस्य का स्थान प्राप्त करते हैं। अपर हाऊस के बड़े पुजारी के चुनाव के बाद इस तरह की रस्म अदा की जाती है। जिसमें उन्हें यह अनुभव कराया जाता है कि उन्हें अपना जीवन पवित्रता से निभाना है। इन दोनों को लोअर हाऊस से एक सहायक दिया जाता है जिन्हें छोटा पुजारी और छोटा कर्मिष्ठ कहा जाता है। अपर हाऊस के सदस्य निर्वाचित होने के तीन माह तक त्याग पत्र नहीं दे सकते हैं। भलाणा में इसके अतिरिक्त प्रत्येक वार्ड से एक सदस्य अर्थात् कुल चार अन्य सदस्यों को चुना जाता है जिन्हें पोगलदार कहते हैं। इनका कार्य जनता से शासन के आदेशों का पालन करवाना है। सभा बुलानी हो तो पोगलदार मैदान में खड़ा होकर आवाज लगाएगा। उसी समय सभी लोग अपने कार्य छोड़कर मैदान में एकत्रित हो जाते हैं । न्याय सम्बन्धी मामलों पर फैसला करना भी ज्येष्ठाँग का कार्य होता है। मुकदमे पर फैसला अपर और लोअर हाऊस दोनों की बहस के पश्चात् होता है । यदि फैसला यहाँ नहीं हो पाता है तो देवता के द्वारा फैसला होता है। फैसले पर अमल करवाने की जिम्मेदारी पोगलदार की होती हैं इस तरह हर प्रकार के मामलों पर सुनवाई तथा निर्णय अपनी न्यायपालिका में ही किया जाता है तथा निष्ठापूर्वक उस पर अमल करते हैं।

पर्यावरण ह्रास : एक समस्या

पी० एस० धमान्दा
भा.व.सं., देहरादून

पर्यावरण ह्रास के विभिन्न कारणों पर यदि शीघ्र नियन्त्रण नहीं किया गया तो 'शस्य श्यामला' धरती माँ काले धुएं के गुबार के रूप में परिवर्तित हो जायेगी और मानव का अस्तित्व सम्भव नहीं रहेगा ।

पर्यावरण का संतुलन जिस तेजी से बिगड़ता जा रहा है वह निश्चित रूप से चिन्ता का विषय है, लेकिन इस संतुलन को कायम रखने के तरीकों में जितनी अधिक असहमतियाँ हैं तथा विचारधाराओं में जितना अंतर हैं, वह भी कम चिन्ता का विषय नहीं हैं। अगर समय रहते इस पृथ्वी को आने वाली पीढ़ियों के लिये रहने योग्य बनाए रखना है, तो हमें अपने स्वार्थ छोड़ सहभागिता की ओर चलना होगा।

आज मनुष्य ऐसा समझता है कि इस पृथ्वी पर जो भी पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, कीट पतंगे, नदी, पर्वत व समुद्र आदि हैं वे सब उसके उपयोग के लिये हैं और वह पृथ्वी का मनमाना शोषण कर सकता है। कमोबेश इसी प्रकार की मनोदशा आज पृथ्वी पर रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की हो गई है क्योंकि मनुष्य एक महत्वाकाँक्षी प्राणी है। इसी महत्वाकाँक्षा ने मनुष्य को जहाँ एक ओर उन्नत और समृद्ध बनाया है वहीं दूसरी ओर कुछ दुष्परिणाम भी प्रदान किये हैं, जो आज विकराल रूप धारण कर हमारे सामने खड़े हैं। किन्तु फिर भी प्रकृति के साथ अत्यधिक छेड़छाड़ करने की मानव की महत्वाकाँक्षा की अग्नि ठण्डी नहीं हो रही है, जिसके चलते आज वह यह नहीं देख पा रहा है कि उसकी कामना, उसके अस्तित्व को ही नष्ट करने जा रही है। पृथ्वी को तो हम विनाश के कगार पर ले ही आये हैं बल्कि आसमान में भी छेद कर डाले हैं।

प्रकृति का अवलोकन करने पर जो कुछ भी हमें परिलक्षित होता है वह वायु,जल,मिट्‌टी, पेड़–पौधे, अन्य वनस्पति तथा वन्यजन्तु, ये सभी सम्मिलित रूप से पर्यावरण की रचना करते हैं। पर्यावरण शब्द वन्यजीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त भौतिक व जैविक परिस्थितियों का योग है। पर्यावरण की उपेक्षा की जाए, ऐसी दुनिया में किसी की धारणा नहीं हैं। लेकिन पर्यावरण का किस तरह से संरक्षण किया जाय तथा पर्यावरण असंतुलन से हुई हानि की भरपाई किस तरह से की जाय इस बारे में दुनिया दो भागों में विभक्त हो चुकी है, चाहे वह राजनैतिक विचारधारा हो या वैज्ञानिक सोच। आज पर्यावरण असंतुलन से उत्पन्न खतरों पर चिन्ता व्यक्त करने तथा कोई रणनीति तय करने के लिये जब सोचते हैं तो उपाय सुझाने के बजाय सभी स्वार्थों की लड़ाई करते नजर आते हैं।

पर्यावरण की सुरक्षा, विकास का एक अनिवार्य भाग है। पर्यावरण की समुचित सुरक्षा के अभाव से विकास को क्षति होती है। पर्यावरण प्रदूषण या पर्यावरण ह्रास के प्रमुख कारण निम्न हैः–

कल–कारखानों में यंत्रीकरण का बढ़ता प्रयोग, बढ़ता ऊर्जा संकट, जनसंख्या बढ़ोत्तरी, परमाणु परीक्षण, विभिन्न प्रजातियों का विलुप्तीकरण, वनों का कटान।

पर्यावरण ह्रास के इन विभिन्न कारणों पर यदि शीघ्र नियन्त्रण नहीं किया गया तो 'शस्य श्यामला' धरती माँ काले धुएं के गुबार के रूप में परिवर्तित हो जायेगी और मानव का अस्तित्व सम्भव नहीं रहेगा अतः पृथ्वी पर जीवन रखने हेतु पर्यावरण ह्रास को कम करने के उपाय करने ही होंगे।

पर्यावरण संरक्षण के प्रमुख उपाय

समग्र चिन्तन की आवश्यकता, वनस्पति संरक्षण, वन्यजीव, पशु–पक्षियों का संरक्षण, उचित तकनीक का उपयोग, पर्यावरण की शिक्षा, वैज्ञानिक चेतना, अन्तराष्ट्रीय सहयोग ।

आज सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण को बनाये रखने का प्रयास करे। इसके लिए सामाजिक संगठन, स्वैच्छिक संगठन, वैज्ञानिक शिक्षा संस्थान, एवं सरकार द्वारा व्यापक स्तर पर जन जागरण चलाया जाना चाहिए। जब तक प्रत्येक व्यक्ति को प्रदूषण के प्रति जागरूक नहीं किया जाता तब तक पर्यावरण को बनाये रखना कल्पना मात्र रह जायेगी।

"एक–एक यदि फूल खिले तो,
चिर बसन्त घर आये
जन–जन का देश प्रेम जगे तो,
पर्यावरण बच जाये"

स्वज्ञान पर आधारित विचार

1. मानव यदि स्थाई सुख की अपेक्षा रखता है, तो उसे हिंसा के क्रूर मार्ग का परित्याग कर अहिंसा का सरल मार्ग अपनाते हुए समस्त प्राणियों के प्रति दया, प्रेम व सेवा का भाव रखना सीखना होगा।
2. दूसरों के प्रति दुर्भावना रखना मनुष्य की दुर्गति का मुख्य कारण है।
3. जिस प्रकार सूप (छाज) से चावल को छटकने पर उस का भूसा सूप से बाहर उड़कर चला जाता है और सूप में मात्र चावल रह जाता है, ठीक उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष हृदय से बुरी प्रवृत्तियाँ बाहर छिटककर मात्र स्वच्छ प्रवृत्तियाँ ही धारण करते हैं।
4. अत्याधुनिक एटमी प्रक्षेपास्त्रों के विकास को अपने सुरक्षा कवच बताने की भूलकर अस्त्र–शस्त्रों की होड़ स्वयं मानव जाति को विनाश के कगार पर ले जा रही है।
5. प्रकृति के बिगड़ते संतुलन को बचाने के लिए वन्यजीवों को और अधिक संरक्षण देना मानव जाति की महती जिम्मेदारी हो गई है।
6. वन्यप्राणी भी मानव जाति की तरह ईश्वर की महान एवम् अति सुन्दर कृति हैं और ईश्वर की कृति से छेड़छाड़ करना मानव जाति को विनाश की ओर ले जाना है।
7. संसार की कोई भी वस्तु न अपनी है न पराई, यदि अपना कुछ है तो वह है परमब्रह्म, इसलिए मानव सांसारिक वस्तुओं के मद में न बहे।
8. सत्कर्म ही मानव को महापुरुष बनाते हैं, जिनका मधुर नाम अमरत्व को प्राप्त कर युगों–युगों तक लिया जाता है।

भुवनचन्द्र उपाध्याय
भा.व.सं., देहरादून

जीवन का वह सरस पर्यावरण

पप्पू कुमार
भा.व.सं., देहरादून

जीवन का वह सरस पर्यावरण जो कविताओं और किताबों से तो हम तक पहुँचता हैं, किन्तु सचमुच हमारे निरन्तर प्रयासों के बावजूद हमसे दूर होता जा रहा है। जैसे–जैसे हम प्रगति की और कदम बढ़ा रहे हैं, हमें बढ़ती हुई पर्यावरण की बरबादी का भी सामना करना पड़ रहा है। प्रगति की इस अन्धाधुन्ध दौड़ में हम भौतिक खुशहाली का दावा अवश्य कर सकते हैं। परन्तु स्वस्थ प्राकृतिक पर्यावरण से सहज ही मिलने वाले जीवनदायी तथ्य कमजोर पड़ते जा रहे हैं, तो आइये हम देखें कि हमारा पर्यावरण किन कारणों से बिगड़ रहा है ? हम अपने रोजाना के क्रियाकलापों से तथा अपनी सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं से जाने अनजाने में पर्यावरण को हानि पहुँचाते हैं। जिसका दुष्परिणाम प्रकृति के सभी अगों विशेष कर जीव–जन्तुओं और वनस्पतियों पर पड़ता है। किन्तु सबसे अधिक मानव समाज ही इसका दुष्प्रभाव झेलता है। जो पानी हमारे जीवन के लिए इतना जरूरी है, वही प्रदूषित हो जाने पर मानव को बीमारियाँ देकर मौत का सबसे बड़ा कारण बनता है। पानी के प्रदूषण के कारण अनेक बीमारियाँ होती हैं–जैसे पेचिश, हैजा, पीलिया, पेट में कीड़े आदि फैलते है तथा मलेरिया भी गंदे ठहरे पानी में मच्छरों की बढ़ोतरी के कारण फैलता हैं। गाँवों में विशेषकर बिना जगत वाले कुओं का पानी दूषित होता है क्योंकि बरसात में चारों ओर की गन्दगी उनमें पहुँचती है। तालाबों का पानी भी नहाने, कपड़े धोने और गन्दगी पड़ने के कारण प्रदूषित होता है। इसी प्रकार से कारखानों और परिवहन साधनों से हमारी वायु भी प्रदूषित होती जा रही है। वायु प्रदूषण से दमा, खाँसी, कैंसर तथा खून की खराबी जैसी बीमारियाँ होती हैं। प्रदूषित वायु से पेड़–पौधों और पुरानी ऐतिहासिक इमारतों को नुकसान पहुँचता है। कल–कारखानों, मोटर गाड़ियों और लाउडस्पीकरों आदि से शोर का प्रदूषण होता है और प्रदूषण से हमारी सुनने की शक्ति दिल की धड़कन, रक्तचाप आदि पर कुप्रभाव पड़ता है तथा मानसिक तनाव पैदा होता है।

> *पौराणिक काल से आज के युग तक धार्मिक कार्यक्रमों, विवाह, नामकरण संस्कार, चूड़ाकर्म संस्कार एवं मृत्यु पर्यन्त तक लकड़ी ही प्रयोग में लाई जाती है। वृक्ष यदि न होते तो मनुष्यों को, जीव जन्तुओं और अन्य प्राणियों को शुद्ध वायु श्वास लेने को भी नहीं मिलती।*

अतः पर्यावरण सन्तुलन से घर, समाज व आसपास के वातावरण में समन्वय और सरसता लाया जाना आवश्यक है। ऐसे क्रियाकलाप रोकने होंगे जिससे पर्यावरण ह्रास साफ दिखाई पड़ता है। छोटे–छोटे जीव जन्तु भी सुरम्य पर्यावरण में संतुलन बनाने में अपना योगदान दे रहे हैं तो क्यों न हम भी साथ ही

साथ पर्यावरण सुधार को भी अपने लक्ष्यों में शामिल कर लें और रचना करें एक स्वरूप एवं उन्नत समाज की। बस चाहिये पर्यावरण का सहज सन्तुलन और इसके प्रति आपकी जागरूकता एवं सजग प्रयास। तब निश्चय ही आप अपनी भावी पीढ़ियों को **दे सकेंगे एक समृद्ध व खुशहाल जीवन।** आइये आज ही हम स्वस्थ पर्यावरण बनाने में अपना योगदान दें, यही हमारे जीवन का सरस पर्यावरण है।

वृक्ष ही जीवन है

पृथ्वी पर अगर वृक्ष न होते तो हमारी पृथ्वी एक बाँझ स्त्री के समान होती। प्राचीन काल में मानव अपना भोजन लकड़ी के चूल्हे पर बनाते थे। लोगों को भोजन और वस्त्र भी वृक्षों से ही प्राप्त होता था। पौराणिक काल से आज के युग तक धार्मिक कार्यक्रमों, विवाह तथा नामकरण संस्कार, चूड़ाकर्म संस्कार, मृत्यु पर्यन्त तक लकड़ी ही प्रयोग में लाई जाती है। वृक्ष यदि न होते तो मनुष्यों को, जीव–जन्तुओं और अन्य प्राणियों को शुद्ध वायु श्वाँस लेने को भी नहीं मिलती। यह संसार बीमारियों का घर बन जाता। हमारे चारों ओर विषैली गैस का प्रभाव होता और हम भिन्न–भिन्न बीमारियों के शिकार हो जाते। यदि वृक्ष न उगे होते तो प्राकृतिक मनोरम दृश्य देखने को न मिलते और न ही आयुर्वेदिक दवाओं का निर्माण होता। संस्कृत के महान कवि कालिदास जी ने अभिज्ञान शाकुन्तलम में प्राकृतिव सौन्दर्य के मनोहारी दृश्यों का वर्णन आदि से लेकर अंत तक किया है।

युगों से खड़ा हूँ तुम्हारे लिये
तुम्हारी खातिर हर बात में हूँ
हवा, पानी, स्वाद और मिट्टी
तुम्हारे जीवन, तुम्हारे पहाड़ को
थामे हुए मैं ढाल पर खड़ा प्रहरी
मत काटो मुझे नीचे तुम्हारा गाँव है
बेरहमी से किये हुए तुम्हारे घावों से
मेरा खून बहता है
खाल उधड़ती पीड़ा होती है मुझे,
तभी तो पेड़ नाम है मेरा
मै तुम्हारा बसंत हूँ
मै बरसात हूँ तुम्हारी खातिर
मत काटो मुझे मैं जीना चाहता हूँ
सिर्फ तुम्हारे लिये।

अन्त मैं में इतना ही कहूँगा कि वृक्ष मानव जीवन का आदि से लेकर अन्त तक एक अंग है। अतः हमें अधिक से अधिक वृक्ष लगाने चाहिए।

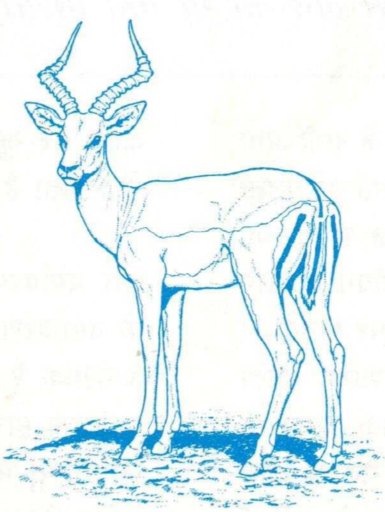

प्रथम पुरस्कार से पुरस्कृत निबंध

सरकारी कामकाज में

हिन्दी के उपयोग की गति धीमी क्यों? इसे गतिमान करने के उपाय

कृष्ण कुमार श्रीवास्तव

भा.व.सं., देहरादून

*"जैसे सौभाग्यवती नारी के माथे पर, शोभा देती है बिन्दी,
वही स्थान रखती है, भारतीय भाषाओं में हिन्दी।"*

हिन्दी,
भारतीयता की पहचान है,
राष्ट्र की अस्मिता है,
गौरव की प्रतीक है,
करोड़ों भारतीयों की मातृभाषा है,
देश की राजभाषा है,
जन–जन की अभिलाषा है

पर हाय रे नियति, हाय रे विधाता,
अपनों से ही टूटता जा रहा इसका नाता ।

हिन्दी,
जो हृदय में बसती है, यहाँ की मिट्टी में रमती है,
उसके लिये सरकारी कामकाज
में जगह कुछ कमती है।

हिन्दी,
प्रयोग में आसान है, पर देश हैरान है
कि आज भी वास्तविकता में
ऊँची कुर्सी पर अँग्रेजी विराजमान है।

"सरकारी कामकाज में हिन्दी की उपेक्षा या हिन्दी के उपयोग की गति धीमी क्यों?" यह विषय स्वतः ही एक स्वीकारोक्ति है, हमारी बहुत बड़ी गलती की। विचार करने पर हमें इसके कारण और निवारण ढूँढ़ने के लिये कहीं बहुत दूर नहीं जाना पड़ेगा। इसके लिये, हमें बस झाँकना होगा अपने अन्तर्मन में। आँकलन करना होगा, अपने आचरण और वचन में। अपनी वाणी और कलम की दिशा को परखना होगा कि वह किस भाषा को प्रमुखता देती है?

सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग की गति धीमी होने के प्रमुख कारण निम्नाँकित हैंः–

1. सबसे प्रमुख व सर्वाधिक चिन्ताजनक कारण है– मानसिक गुलामी। "अँग्रेज चले गये, अँग्रेजी छोड़ गये" की उक्ति सभी को ज्ञात है, किन्तु इस परतंत्रता से उबरना कौन चाहता है ? हाँ, यह सत्य है कि अँग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा है, पर सरकारी कामकाज में हमें ऐसी कोई बाधा नहीं है, जो हमें हिन्दी के प्रयोग से वंचित करे। मात्र हमारी मानसिक परतंत्रता ही हिन्दी के प्रयोग को कम करने को विवश करती है।

2. सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग की गति धीमी होने का एक महत्वपूर्ण कारण है, भारतीयों में राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति विशेष चिन्ता का न होना।

"भारतेन्दु हरिश्चन्द्र" ने हिन्दी को निज राष्ट्र के गौरव का प्रतीक माना है।

"महात्मा गाँधी" जो विदेश से उच्च–शिक्षा प्राप्त करके आये, जिन्होंने अँग्रेजों को भारत से बाहर निकालने में महती भूमिका अदा की, उन्होंने स्वयं हिन्दी के उपयोग को प्रमुखता दी और कहा कि हिन्दी, हिन्दुस्तान की सम्पर्क भाषा हैं, इसके प्रयोग को बढ़ाना चाहिये। स्वयं राष्ट्रपिता ने अन्य विभिन्न भाषा–भाषी विद्वानों के सहयोग से हिन्दी को उच्च स्तर पर लाने के प्रयास किये।

हिन्दी को राजभाषा का दर्ज़ा दिलाने के लिये अहिन्दी भाषियों के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता, किन्तु अब उस "राष्ट्रीय–अस्मिता" के प्रति नव–पीढ़ी और स्वातंत्र्योत्तर पीढ़ी के लोगों को विशेष चिन्ता नहीं रही।

3. हिन्दी को राजभाषा का दर्ज़ा तो मिल गया, पर आज भी वह अँग्रेज़ी की चेरी बनी हुई है, तो इसके लिये ज़िम्मेदार है–हमारी व्यवस्था, जिसमें सभी को समानता, स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसी सुविधायें तो दे दी गई, अधिकार तो प्रदान कर दिये गये संविधान की धारा उन्नीस के उपबन्धों में, किन्तु कर्त्तव्यों की कड़ी लगाम नहीं लगाई गई। हमें इस प्रावधान को लागू करने में कतई संकोच नहीं होना चाहिये कि सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य है।

4. भारत जैसे विशाल देश और सर्वाधिक विविधताओं वाले देश में धर्म, जाति, भाषा, खान–पान, आचार–विचार, जीवन–पद्धति और भौगोलिक विभिन्नताओं का बाहुल्य है और यहाँ अहिन्दी–भाषी क्षेत्रों में शासकीय कर्मचारियों को हिन्दी के उपयोग के बारे में जागरूक बनाने की आवश्यकता है। हिन्दी–भाषी क्षेत्रों में तो सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को अनिवार्यता के साथ लागू किया जाना चाहिये।

5. प्रत्येक सरकारी विभाग में समय–समय पर हिन्दी की कार्यशालायें, संगोष्ठियाँ व सम्मेलनों का आयोजन हो, जिससे लोगों में एक भाव जगे कि हिन्दी ही हमारे राष्ट्र की जीवन धारा है।

6. अहिन्दी–भाषी क्षेत्रों में हिन्दी के उपयोग पर विशेष प्रोत्साहन योजना को प्राथमिकता के आधार पर चलाया जाना चाहिये। इसके साथ ही हिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी का प्रयोग न करने पर कुछ चेतावनी या आँशिक दण्ड का प्रावधान किया जा सकता है।

7. तकनीकी व चिकित्सकीय संस्थानों, विभागों व कार्यालयों में इस प्रकार के साहित्य का प्रचार व प्रसार किया जाये जिससे इन जगहों में हिन्दी का प्रयोग आसान बनाया जा सके।

8. हिन्दी के अत्यन्त शुद्ध रूप के प्रयोग की हमें सरकारी कामकाज में विशेष आवश्यकता नहीं। मात्र कामचलाऊ और आसानी से समझ में आने वाली हिन्दी के प्रयोग को स्वीकारना होगा।

9. सरकारी कामकाज में हिन्दी को प्रभावित करने वाली वजहों में एक है, उसकी क्लिष्टता, बोधगम्यता का अभाव और तकनीकी दृष्टि से सरल शब्दों की न्यूनता। इसे दूर करने के लिये हमें हिन्दी की एक अन्य विशेषता को अपनाना चाहिये। हिन्दी की वह विशेषता है–अन्य

भाषाओं के शब्दों को अपने में समाहित करने की क्षमता । आवश्यकता पड़ने पर हम हिन्दी में अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों का भरपूर प्रयोग कर सकते हैं।

10. सरकारी कामकाज में हिन्दी के उपयोग की धीमी गति का एक कारण है– ***"यथा राजा तथा प्रजा"*** – यदि ऊपर से ऐसे उदाहरण लगातार निचले स्तर तक मिलते रहें जिससे हिन्दी के प्रयोग को बल मिले तो ऐसी कोई वजह नहीं रह जाती कि सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को गतिमान न किया जा सके।

11. सरकारी कार्यालयों में अहिन्दी–भाषी कर्मचारियों को समय–समय पर हिन्दी के प्रशिक्षण पर भेजते रहना चाहिये।

12. हिन्दी पुरस्कार योजना को प्रमुखता से लागू किया जाना चाहिये।

13. हिन्दी में मात्रायें, स्वर, व्यंजन, हलन्त्, विराम व संकेत चिन्हों की प्रचुरता है, जिसके कारण लोगों को अनेक समस्यायें आती हैं। हिन्दी के मर्मज्ञ विद्वानों को हिन्दी पर शोध करने की आवश्यकता है एवम् इसे और भी अधिक सरल व बोधगम्य बनाने पर बल देना होगा।

14. स्वतंत्रता के पचपन कीमती वर्ष बीतने के उपरान्त भी सरकारी कामकाज में, यदि हिन्दी के प्रयोग में गति नहीं आई है तो उसके लिये एक अन्य महत्वपूर्ण कारक है–टालने की प्रवृत्ति, दिखाने की प्रवृत्ति।

इस ख़तरनाक प्रवृत्ति से सभी सरकारी महकमों को बचाना होगा ताकि हमारी राष्ट्रभाषा, सच्चे अर्थों में हमारी सम्पर्क भाषा बन सके और उस सम्मान की हकदार बन सके जो उसे हिन्दुस्तान में, भारत में प्राप्त होना चाहिये।

जय हिन्द, जय हिन्दी।

एक–एक करके देखो

एक–एक यदि पेड़ लगाओ ।
तो तुम बाग लगा दोगे।।

एक–एक यदि रूपया जोड़ो।
तो तुम बन जाओगे धनवान।।

एक–एक यदि पत्थर जोड़ो।
तो तुम महल बना लोगे।।

एक–एक शब्द नया यदि सीखो।
तो तुम बन जाओगे विद्वान।।

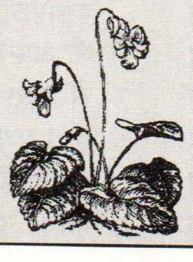

बलबीर सिंह चौहान
भा.व.सं., देहरादून

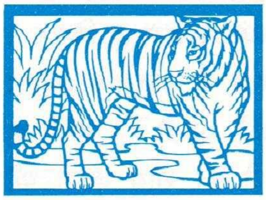

वन्यजीवों की सुरक्षा एवम् उनकी महत्ता

भुवनचन्द्र उपाध्याय

भा.व.सं., देहरादून

पशु भी मानव के सेवाभाव व प्यार को महसूस करते हैं, विभिन्न प्रकार के पशु अपने पूँछ, पैर, कान, नाक के थूथनों से, सूँड से, आँख, जीभ व सींगों से अपनी इच्छा, अनिच्छा, जिज्ञासा, भय, आक्रोश, प्रेम, धैर्य, ममता, संतुष्टि संवेदनशीलता, वीरता, खुशी, दुःख, हँसना रोना व अभिनन्दन व्यक्त करते हैं। प्रकृति द्वारा प्रदत्त पहाड़, नदी, सरोवर व वृक्ष प्राणियों के वास स्थल हैं।

सृष्टि रचयिता ने अपनी सुन्दर रचना से सजा–संवारकर प्रकृति का निर्माण किया है। दशों दिशाओं में व्याप्त उस दिव्य दृष्टा को प्रकृति की रचना करते समय यह ज्ञान भी था कि इस सृष्टि को विधिवत संचालित करने हेतु व इसका संतुलन बनाये रखने के लिए प्रकृति हेतु किन–किन रचनाओं व गुणों की आवश्यकता पड़ेगी और इसके रख–रखाव के लिए जिम्मेदार (आधार स्तम्भ) कौन होगा इसलिए उसने अपनी रचनाओं में सुन्दर पर्वत श्रृंखलाऐं, आयुर्वेद हेतु विभिन्न प्रकार के वन प्रदेश व विभिन्न गुणों से युक्त फलदार वृक्ष बनाये। विभिन्न गुणों व रंगों से युक्त पुष्प, भिन्न–भिन्न उपयोग हेतु मिट्टी, पत्थर की रचना की, कलरव करते हुए झरने नदियाँ बनाईं। विभिन्न क्षेत्रानुसार विभिन्न गुणों व रंगों के पशु–पक्षी, कीट–पतंगे बनाये जिनके संरक्षण हेतु व प्रकृति की व्यवस्था ठीक से बनाये रखने हेतु उसने आधार स्तम्भ के रूप में मानव की उत्पत्ति की। कुछ पशु–पक्षियों का स्वभाव हिंसक व कुछ की विषैली प्रकृति बनाई। कुछ में शाकाहारी के गुण तथा कुछ में माँसाहारी के गुण डाले व उनके शरीर की बनावट व त्वचा की संरचना भी इन्हीं गुणों का एक अंग है। कोई शिशु के रूप में अपनी नई पीढ़ी को जन्म देता है तो कोई अंडे से उसने अपनी रचना में सूक्ष्म से भी सूक्ष्म जीवाश्म से लेकर विराट से भी विराट डायनासौर जैसे प्राणियों व वस्तुओं की उत्पत्ति की। इन सभी उत्पत्तियों में मानव उसकी श्रेष्ठ कृति है। इसके साथ–साथ परोपकार हेतु सृष्टि की विधिवत व्यवस्था को सुरक्षित हाथों में रखने हेतु मनुष्य को परम विवेकी बनाया।

वर्तमान में हमें अपने दैनिक जीवन में प्रायः देखने और सुनने को मिलता है कि उक्त वन प्रान्त के उक्त स्थान पर तस्करों ने इतने हाथी मार डाले या उक्त क्षेत्र के उक्त स्थान पर रेलवे ट्रैक को पार करते समय रेल से इतने हाथी कट कर मर गये या जंगल से लगते खेतिहर क्षेत्र में हाथियों या अन्य पशुओं द्वारा फसल की क्षति करने पर उन पर बन्दूक से छर्रे दागे गये। इसके अतिरिक्त कुछ दैवीय प्रकोप से, कुछ व्याधि से और कुछ आपस में लड़कर मर जाते हैं। यही गंभीर समस्या वन प्रान्त में निवास करने वाले अन्य प्राणियों शेर, चीता, हिरन, मोर इत्यादि पशु पक्षियों की है, जिस कारण हमारे भारतवर्ष के वैभव को बढ़ाने वाले दुर्लभ व बहुमूल्य वन्य प्राणियों की संख्या में कमी आयी और बहुत सी प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर हैं।

वन्यप्राणी भी मनुष्य की तरह ज्ञानवान होते हैं। उन्हें भी अपने व पराये का बोध रहता है, वे भी मोहमाया से ग्रस्त रहते हैं, उनमें भी कई पशु परोपकारी होते हैं । पशु भी मानव के सेवाभाव व प्यार को महसूस करते हैं, विभिन्न प्रकार के पशु अपने पूँछ, पैर, कान, नाक के थूथनों से, सूँड से, आँख, जीभ व

सींगों से अपनी इच्छा, अनिच्छा, जिज्ञासा, भय, आक्रोश, प्रेम, धैर्य, ममता, संतुष्टि संवेदनशीलता, वीरता, खुशी, दुःख, हँसना रोना व अभिनन्दन व्यक्त करते हैं। प्रकृति द्वारा प्रदत्त पहाड़, नदी, सरोवर व वृक्ष प्राणियों के वास स्थल हैं। प्रकृति ने प्राकृतिक वनस्पतियों में से कुछ विशेष प्रकार की वनस्पतियाँ जीवनरक्षक औषधि के रूप में इन्हें उपहार स्वरूप भेंट की हैं, और इन्हें इतना ज्ञान भी दिया है कि आवश्यकता पड़ने पर ये उसे पहचान कर औषधि के रूप में ग्रहण कर सकें। पशु–पक्षी संगीत व नृत्य प्रेमी भी हैं, ये अपना पूरा कार्य स्वयं ही कर लेते हैं, लेकिन इन्हें मानव से मात्र अपनी सुरक्षा की आकाँक्षा है।

वन प्रदेश के वृक्ष एवम् वन्यप्राणी व मानव जाति एक दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों में से किसी भी एक के बिना सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि के कारण वन प्रदेश से वृक्षों की असीमित कटाई करके आबादी क्षेत्र बनाने से जैसे–जैसे वन क्षेत्र का विस्तार घटता जा रहा है, वैसे–वैसे इन वन क्षेत्र में रहने वाले प्राणियों के लिए व इनके संरक्षकों के लिए नई–नई प्रकार की समस्याऐं उभर कर सामने आ रही हैं। वन्यप्राणी अपना क्षेत्र समझकर आबादी वाले क्षेत्रों में आकर समस्या खड़ी कर रहे हैं। वृक्षों के कटने से वातावरण भी प्रभावित हुआ है। इस प्रकार की समस्याओं के निवारण हेतु यदि समय रहते उपाय न ढूँढ़ा गया तो आने वाला समय मानव जाति के लिए मारक व चुनौतीपूर्ण होगा। हमारे तपस्वी ऋषिमुनियों को भी वन्यप्राणियों से बहुत स्नेह था। उन्होंने पशु–पक्षियों को बहुत महत्व दिया। उनके पावन तपोक्षेत्र में कोई भी राजा किसी भी पशु का आखेट करने की हिम्मत नहीं कर सकता था । सोने की चिड़िया कहलाने वाला महान भारतवर्ष, जिसका नाम राजा दुष्यन्त व शकुन्तला के पुत्र भरत के नाम पर पड़ा, का बहुत ही गौरवशाली इतिहास रहा है। जिस देश की भूमि तप से तपी हो, जिस देश में ऋषि मुनियों ने ऊँची परम्परा, संस्कृति व आदर्शों की नींव रखी हो, जो देश समस्त भूमण्डल की शान हो, जिसने एक तपोभूमि से समस्त विश्व को शांति व अहिंसा का मार्ग दिखाया हो, जो जगद्गुरू के पद पर रहा हो, जिस पावन भूखण्ड को स्वयं सर्वशक्तिमान स्वयंभू ने अपना निवास क्षेत्र चुना हो। जिस देश में गाय को माँ का दर्जा प्राप्त हो एवम् पूजा जाता हो, जहाँ वृक्षों में देवताओं का वास मानकर पूजा परिक्रमा की जाती हो, जहाँ विभिन्न पशु–पक्षियों की भिन्न–भिन्न देवताओं की सवारी के रूप में पूजा अर्चना की जाती हो, उस देश में वृक्षों का एवम् वन्यप्राणियों का विनाश उनकी सुरक्षा में ढुलमुल रवैया प्रशासन व जन–जन के लिए शर्म का विषय है। मानव जाति पर कलंक का धब्बा व भारत की महान संस्कृति पर हमला है, जो क्षेत्र कभी अरण्य क्षेत्र थे, आज वे आखेट स्थल बन गये है, क्योंकि हमने अपनी संस्कृति व आदर्शों को बहुत पीछे छोड़कर आधुनिकता और स्वार्थ की अंधी दौड़ में शामिल होकर अपना चरित्र खो दिया है। हम इतने स्वार्थी व पाषाण–हृदयी हो गये हैं कि यदि कोई चोटग्रस्त हो जाये तो हमें कोई फर्क नहीं पड़ता । दया, अहिंसा, निस्वार्थ परोपकार मानव का मूल धर्म रहा है, जो मानव हितों का संरक्षण करता है, इसलिए कहा गया है:

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान
तुलसी दया न छोड़िये, जब तक घट में प्राण

वृक्ष व वन्यजीव मानव जाति हेतु प्रकृति की व्यवस्था का अनुपम उपहार है, जो मानव जीवन के महान व ऊँचे उद्देश्यों की पूर्ति में अपनी महती भूमिका का निर्वाह करते हैं। इन अमूल्य धरोहरों को और अधिक संरक्षण की अति आवश्यकता है ताकि हमारी आने वाली नई पीढ़ी स्वच्छ वातावरण में जी सके, निरोग रहे एवम् ईश्वर द्वारा प्रदत्त सुन्दर वन्यजीवों को निहार कर आनन्द ले सकें। इन्हें क्षति पहुँचाने का तात्पर्य है, प्रकृति की अनुपम व रंग–रंगीली व्यवस्था को छिन्न–भिन्न करने का प्रयत्न और ऐसा प्रयत्न करने का अर्थ है मानव जाति के विनाश को आमंत्रित करना। जिस प्रकार पूरक सामग्री एवं श्रद्धा के बिना बनाया भोजन मधुर रसीला सुगंधित व स्वादिष्ट नहीं बन सकता उसी प्रकार वन्य प्राणियों व पर्याप्त वृक्षों के अभाव में मानव जीवन सुखमय नहीं हो सकता। इसलिए हम सबको मिलकर वृक्षों व वन्य प्राणियों के संरक्षण के प्रति जन–जन में चेतना की ज्योति जगाने की अति आवश्यकता है।

राजभाषा का कार्यालय में प्रयोग एवं उसमें आने वाली बाधाएं

यशपाल सिंह वर्मा
भा.व.सं., देहरादून

सरकार ने बहुत ही सचेत और सक्रिय ढंग से पूरे देश के सभी केन्द्रीय संस्थानों/कार्यालयों में सरकार की सम्पर्क भाषा हेतु हिन्दी को राजभाषा के पद पर व्यावहारिक रूप से लागू करने के लिए गृहमंत्रालय के अधीन एक स्वतन्त्र राजभाषा विभाग की स्थापना की। प्रत्येक विभाग में हिन्दी अनुवादक, हिन्दी अधिकारी तथा टंकक के पद सृजित किये तथा हिन्दी समितियों और केन्द्रीय हिन्दी सचिवालयों की स्थापना हेतु निर्देश जारी किये।

किसी देश की भाषा न केवल उसकी चेतना और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक होती है अपितु जन–जन के अन्दर राष्ट्रीय भावना को उभारने वाली एक गतिशील ऊर्जा है, जो उस देश की प्रगति व उत्थान के लिए आवश्यक है। इस तथ्य को स्वराज्य प्राप्ति से बहुत पूर्व ही कविवर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने रेखाँकित करते हुए कहा था :

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल"

जब हम कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग पर चर्चा करते हैं तो अप्रत्यक्ष रूप से राजभाषा की ही बात कर रहे होते हैं। संस्थानों व कार्यालयों में राजकाज से सम्बन्धित तकनीकी अथवा गैर तकनीकी कार्यों को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा किस हद तक प्रभावी हो पायी है तथा इसके प्रचार–प्रसार व संरक्षण, संवर्धन हेतु क्या–क्या कदम उठायें गये हैं? इन्हीं मुद्दों पर यहाँ प्रकाश डालने की कोशिश की गई है।

आज हमारे देश को स्वाधीन हुए पाँच दशकों से ऊपर हो चुके हैं और हिन्दी को हमारे संविधान में राजभाषा का गौरवपूर्ण स्थान भी प्राप्त हो चुका है। परन्तु शासकीय कार्यों में हिन्दी का प्रयोग किस स्तर तक होता है? यह सोचकर अफसोस होता है क्योंकि हिन्दी का प्रयोग नहीं के बराबर है। हिन्दी को राजभाषा का वास्तविक स्थान अभी तक नहीं मिल सका है। राजभाषा के विषय में अपने संवैधानिक दायित्वों को पूरा करने के उद्देश्य से भारत सरकार हिन्दी को अपने कार्यालयों और प्रतिष्ठानों में प्रभावी रूप से सरकारी कामकाज की भाषा बनाने के लिए समय–समय पर अनेक अधिनियमों, आदेशों एवं प्रोत्साहन योजनाओं को जारी करती रही है। फिर भी न ही सरकार और न ही इन कार्यालयों और प्रतिष्ठानों में कार्य कर रही जनशक्ति इस ओर आकर्षित व सजग हुई है।

राजभाषा का अर्थ दैनिक सरकारी कामकाज में प्रयोग होने वाली हिन्दी भाषा से है न कि कठिन साहित्यिक भाषा से। इसलिए इस राजकाज की सरल व्यावहारिक भाषा को राजभाषा नाम दिया गया है।

हिन्दी का जन्म भारत की मूल भाषा संस्कृत से हुआ है। प्राचीन काल में सम्पूर्ण राजकाज संस्कृत भाषा के माध्यम से होता था। इस काल में साहित्य में राज्य, राष्ट्र और राजनीति का महत्वपूर्ण विवरण मिलता है। इतिहास देखने पर ज्ञात होता है कि आठ सौ वर्षों से इस देश के विभिन्न प्रशासनों में

राजभाषा के रूप में हिन्दी की परम्परा है। महाराजा पृथ्वीराज चौहान और रावल समर सिंह के पत्र इसके ज्वलंत प्रमाण है। महमूद गजनवी और मौहम्मद गौरी के काल के ऐसे बहुत से सिक्के उपलब्ध हैं जिन पर 'देवनागरी लिपि' में हिन्दी भाषा का प्रयोग मिलता है।

लेकिन दुर्भाग्यवश जब सन् 1975 तक भी हिन्दी हमारे पूरे भारत गणराज्य के सरकारी कामकाज की एक समान सम्पर्क भाषा के रूप में स्थापित नहीं हो पाई, तब यह बात सरकार की चिन्ता का कारण बनी तथा सरकार ने बहुत ही सचेत और सक्रिय ढंग से पूरे देश के सभी केन्द्रीय संस्थानों/कार्यालयों में सरकार की सम्पर्क भाषा हेतु हिन्दी को राजभाषा के पद पर व्यावहारिक रूप से लागू करने के लिए गृहमंत्रालय के अधीन एक स्वतन्त्र राजभाषा विभाग की स्थापना की। प्रत्येक केन्द्रीय कार्यालय सहित सार्वजनिक उपक्रमों को भी राजभाषा समिति गठित करने के निर्देश जारी किये तथा व्यापक रूप से हिन्दी के प्रचार–प्रसार व प्रयोग पर बल दिया। प्रत्येक विभाग में हिन्दी अनुवादक, हिन्दी अधिकारी तथा टंकक के पद सृजित किये तथा हिन्दी समितियों और केन्द्रीय हिन्दी सचिवालयों की स्थापना हेतु निर्देश जारी किये। सरकार का इतना योगदान होते हुए भी मूल रूप से संस्थानों व कार्यालयों में इन निर्देशों पर अमल नहीं हो पा रहा है।

अहिन्दी–भाषियों में हिन्दी के प्रति रुचि एवं लगाव पैदा करने हेतु शिक्षण योजनाएं, पुरस्कार व प्रोत्साहन योजनाएं बनाई गयीं, परन्तु फिर भी जो लगन व उत्साह राजभाषा के प्रति कार्यालयों में होना चाहिए था, नहीं हो पाया है। हिन्दी को राजभाषा घोषित होने के इतने लम्बे अर्से के बाद कर्मचारियों, शिक्षार्थियों व परीक्षार्थियों में शुद्ध व अच्छी हिन्दी लिखने की योग्यता हो गई होगी, ऐसी आशा थी। किन्तु देखने में आता है कि अभी भी अधिकाँश कर्मचारी और परिक्षार्थी शुद्ध व अच्छी हिन्दी नहीं लिख पाते हैं । परन्तु इसका कारण क्या है ? कोई जानने की कोशिश नहीं करता है, क्योंकि आज समाज में अपनी ही भाषा को बोलने और स्वीकारने में हम हीन भावना का अनुभव करते हैं। जब प्राथमिक शिक्षा के दौरान ही बच्चों को अपनी ही राजभाषा से विमुख कर दिया जाता है तो भला वह कार्यालयों में पूर्णरूप से कैसे प्रतिपादित हो सकती है ? महज एक उदाहरण के तौर पर आप ले लीजिए, हम बच्चों को बोलने की शुरूआत में ही उसे "गुडमार्निंग" "हैलो" "हाय" जैसे शब्दों से अभिवादन सिखाते हैं, "नमस्ते या नमस्कार" नहीं क्योंकि "नमस्ते" या "प्रणाम" बोलने पर उसकी व उसके माता–पिता की समाज में इज्जत कम होती है, लोग मजाक बनाते हैं उनका स्तर नीचा समझते हैं । बस यहीं से शुरू हो जाती है हिन्दी के प्रति बच्चों में कमजोर भावनाओं की पैदाइश और ये ही कमजोरियाँ आगे चलकर हर क्षेत्र में राजभाषा के प्रति मनुष्यों को उदासीन बना देती हैं। इसलिए इसके दोषी हम ही हैं। अब चाहकर भी हम कार्यालयों में राजभाषा को हर क्रिया–कलाप में स्थापित नहीं कर पाते हैं क्योंकि शुद्ध व अच्छी हिन्दी का ज्ञान हमें नहीं है और जिस विषय का ज्ञान ही नहीं है उसे अपनाने में कठिनाई आती है और उस कठिनाई को हम हल भी नहीं करना चाहते हैं क्योंकि जब दूसरी भाषा के प्रयोग से काम चल रहा हो तो क्या जरूरत है दिमाग पर जोर देने की ? इसके अलावा विभागाध्यक्षों एवम् अधिकारियों को भी राजभाषा हिन्दी में लिखित प्रलेखों, पत्रों आदि को समझने व पढ़ने में कष्ट होता है। इसलिए वे भी कोई आदेश या प्रतिबंध नहीं लगाते हैं, जिससे कर्मचारी भी हिन्दी में कार्य करना जरूरी नहीं समझते हैं।

अब सवाल उठता है कि कार्यालयों में किस प्रकार किन–किन कार्यों और विषयों में राजभाषा का प्रयोग आवश्यक है और इसको अपनाने में क्या–क्या बाधाएं कर्मचारियों व अधिकारियों को होती हैं ? वैसे तो कार्यालयों का सभी कार्य पूर्णरूपेण राजभाषा हिन्दी में होना असम्भव है लेकिन अधिक से अधिक कार्य तो हिन्दी में करना सम्भव है जैसे–अवकाश प्रार्थना पत्र, सहकारी समिति के आवेदन पत्र, शुभकामना संदेश, भाषण, टंकण, टिप्पणी, प्रारूप, आलेखन, निबंध, आशुलिपिवाद, समस्त सूचना पट्ट व नाम पट्ट और हिन्दी व्यवहार, पत्र लेखन, निविदा

नोटिस, संक्षिप्त लेखन आदि। बल्कि अब तो कार्यालयों में संगणक (कम्प्यूटर) हेतु हिन्दी में सॉफ्टवेयर भी उपलब्ध हैं। किन्तु इन सबमें हिन्दी में काम करने में जो बाधाएं आती हैं, वे इस प्रकार है:–

1. कार्यालयों व संस्थानों में कार्य कर रहे कर्मचारियों व अधिकारियों में हिन्दी के प्रति झुकाव कम होना।
2. इन विषयों पर हिन्दी से सम्बन्धित अच्छी सहायक पुस्तकों, कोषों, शब्दावलियों एवं वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान का उपलब्ध न होना।
3. हिन्दी आशुलिपिकों की कमी।
4. हिन्दी के टंकण यन्त्रों की कमी।
5. हिन्दी अनुवादकों की कमी और जो हैं उन्हें पूर्णरूपेण सुविधाएं न देना।
6. राजभाषा सम्मेलन तथा संगोष्ठियों एवं हिन्दी कार्यशालाओं का समय पर न होना आदि।

इसके अलावा भारत व भारत की संस्कृति को समझने के लिए, हिन्दी भाषा और साहित्य के अध्ययन हेतु विद्यालयों और विश्वविद्यालयों व शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी का अध्ययन होना बहुत आवश्यक है। नागरिकों का यह दायित्व है कि वे भी राजभाषा हिन्दी को व्यवहार में लायें नहीं तो आने वाली पीढ़ियों में राजभाषा हिन्दी भी उसी प्रकार लुप्त हो जायेगी जैसे उर्दू व संस्कृत भाषा का अस्तित्व अंधकारमय हो गया है।

कार्यालयों में दैनिक कामकाज में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग में आने वाली बाधाओं और समस्याओं का समाधान है लेकिन उसके लिए दृढ़ निश्चय के साथ हिन्दी प्रेम को क्षणिक रूप न देते हुए सदाबहार व शाश्वत स्वरूप प्रदान करना होगा, तभी हम निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप राजभाषा हिन्दी को वास्तव में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकते हैं। इसके लिए–

1. कार्यालयों में अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिन्दी पर कार्यशालाओं के माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए।
2. राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन करना, राजभाषा विभाग, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति को आवधिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना। पुरस्कार योजनाओं, को लागू करना, व हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन करना।
3. कार्यालयों में अनिवार्य प्रपत्र द्विभाषी होने चाहिए।
4. कम्प्यूटरों में हिन्दी प्रयोग की व्यवस्था होनी चाहिए तथा कम्प्यूटर पर हिन्दी टंकण करते समय आने वाली बाधाओं का अधिकारियों द्वारा प्रशिक्षण के माध्यम से दूर करना।
5. हिन्दी के प्रति अधिक से अधिक रुचि बढ़ाने के लिए हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह और हिन्दी मास का आयोजन होना आवश्यक हैं जिसमें विभिन्न प्रकार के आयोजन जो भाषण, श्रुतिलेख, कविता पाठ, गीत, कहानी लेखन, निबन्ध लेखन और सामान्य ज्ञान प्रतियोगिताओं आदि के रूप में होने चाहिए।
6. हिन्दी आशुलिपिकों व टंककों को हिन्दी आशुलिपि एवं हिन्दी टंकण का प्रशिक्षण–हिन्दी शिक्षण योजनाओं के द्वारा प्राप्त करवाना चाहिए।
7. अधिकरियों व कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति रुचि जागृत करने के लिए संस्थानों व कार्यालयों के पुस्तकालयों में हिन्दी पुस्तकें, पत्रिकाएं और हिन्दी के समाचार पत्रों को उपलब्ध कराना चाहिए।
8. प्रतिवर्ष अधिकतम सरकारी कामकाज हिन्दी में करने वालों को पुरस्कार प्रदान कर प्रोत्साहित करना चाहिए।

इस प्रकार समस्त नागरिक राजभाषा हिन्दी के प्रयोग में सहयोग दें तभी इसका विकास सम्भव है। सबका यह दायित्व है कि अपनी राजभाषा को सटीक, स्तरीय एवं समृद्ध बनाने के लिए प्रतिदिन यथासामर्थ्य हिन्दी का प्रयोग करना सीखें तभी हम इसे संस्थानों व कार्यालयों में मूर्तरूप दे सकते हैं।

कुछ भी

एम0डी0 गुप्ता
भा.व.सं., देहरादून

संस्थान में राजभाषा हिन्दी को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से हिन्दी की लघु पुस्तिका के **प्रकाशन** से सम्बन्धित कार्यों के दायित्व को पूरा करने के क्रम में श्री के0के0 श्रीवास्तव, श्रीमती बलजीत कौर और मैं, श्री एम0एस0 राणा के कक्ष में उपस्थित थे। श्री राणा संस्थान के अधिकारियों/शोधार्थियों एवं कर्मचारियों से दूरभाष पर संपर्क कर उन्हें इस पुस्तिका में प्रकाशन हेतु सामग्री उपलब्ध करवाने का निवेदन कर रहे थे। इसी क्रम में जब दूसरी ओर से उनसे यह पूछा जा रहा था कि क्या लिखें तब उनके द्वारा बार–बार सभी से यह अनुरोध किया जा रहा था कि वन्यजीव संरक्षण एवं जीवन के विविध आयामों से सम्बन्धित कविता, कहानी, लेख इत्यादि में से "कुछ भी" लिखकर भेज दीजिये।

बार–बार "कुछ भी" शब्द सुनकर मेरे अन्तर्मन में यह प्रेरणा हुई कि क्यों न इस "कुछ भी" पर ही कुछ लिखा जाये और शुरू हो गई इस "कुछ भी" पर मनन की प्रक्रिया। मैंने जब इस "कुछ भी" पर मनन किया तो पाया कि यह छोटा सा शब्द "कुछ भी" अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण और विस्मयकारी है।

श्री एम0एस0 राणा के श्री मुख से बार–बार "कुछ भी" शब्द सुनकर मेरे अन्तर्मन में यह प्रेरणा हुई कि क्यों न इस "कुछ भी" पर ही कुछ लिखा जाये और शुरू हो गई इस "कुछ भी" पर मनन की प्रक्रिया। मैंने जब इस "कुछ भी" पर मनन किया तो पाया कि यह छोटा सा शब्द "कुछ भी" अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण और विस्मयकारी है। यह "कुछ भी" किसी भी व्यक्ति की सोच उसका उद्देश्य और उसके जीवन की दशा एवं दिशा दोनों को परिवर्तित करने की अपूर्व क्षमता रखता है। यह "कुछ भी" हमारे पूरे जीवन चक्र से और जीवन के प्रत्येक आयाम से किस तरह जुड़ा है, प्रस्तुत है उसकी एक संक्षिप्त झलकः–

1. *बच्चे का इस जग में आगमन हुआः* बच्चे को देखने आने वाले कहते हैं– और "कुछ भी" नहीं करता, हमेशा रोता ही रहता है।

2. *बच्चा थोड़ा बड़ा हुआः* माता–पिता कहते हैं, बहुत शरारती बच्चा है, शरारत के अलावा "कुछ भी" नहीं करता या बहुत ही समझदार बच्चा है, "कुछ भी" शरारत नहीं करता।

3. *बच्चा थोड़ा और बड़ा हुआः* स्कूल जाने लगा माता–पिता कहने लगे, हमेशा पढ़ता–लिखता रहता है, पढ़ने–लिखने के अलावा और "कुछ भी" नहीं करता। बहुत बुद्धिमान है या अबे कुछ पढ़–लिख भी लिया कर, कभी "कुछ भी" नहीं पढ़ता–लिखता, बहुत ही नालायक एवं निकम्मा है।

4. *बच्चे की शिक्षा पूरी हुईः* परिवार वाले कहने लगते हैं– बहुत ही मेहनती व समझदार बच्चा है, जीवन में "कुछ भी" बन सकता है या कभी

ढंग से पढ़ाई–लिखाई नहीं की, बहुत ही नालायक व निकम्मा है, जीवन में "कुछ भी" नहीं बन सकता । इसका "कुछ भी" नहीं हो सकता है।

5. *शिक्षा पूरी करने के बाद काम की तलाश में है:* जब तक काम नहीं मिलता तब तक माता–पिता कहते हैं, अबे "कुछ भी" नहीं करता सारा दिन आवारागर्दी करता रहता है, बेकार और निकम्मा घूमता रहता है। "कुछ भी" कर ले हम पर बोझ तो मत बन।

6. *काम मिलने पर कार्यालय में अधिकारी कहता है:* बहुत ही अच्छा कर्मचारी है, "कुछ भी" काम दे दो हमेशा पूरा करता है, कभी "कुछ भी" बहाने नहीं बनाता या कैसे आदमी हो कभी "कुछ भी" नहीं करते हो। "कुछ भी" काम दो हमेशा "कुछ भी" बहाना बना देते हो । सारा दिन इधर–उधर घूमते रहते हो या कैण्टीन में बैठे रहते हो। कभी कुछ कर भी लिया करो।

7. *युवा अवस्था में:* यदि अपना ऐसा "कुछ भी" न हो जिसे समीप पाकर कुछ–कुछ होने का अहसास न होता हो तो ये जीवन "कुछ भी" नहीं लगने लगता है।

8. *कुछ–कुछ होने पर:* प्रेमी–प्रेमिका को जब भ्रमवश एक दूसरे के बीच "कुछ भी" होने का अहसास होने लगता है, तो उन्हें इस "कुछ भी" के अतिरिक्त दुनिया में और "कुछ भी" नजर नहीं आता। उनकी नजर में ये जो "कुछ भी" उनके बीच है, वही सब कुछ है और "कुछ भी" नहीं।

9. *शादी होने पर:* पत्नी कहती है हमेशा सब कुछ अपने माता–पिता एवं भाई–बहनों के लिये ही करते रहते हो मेरे लिये कभी भी "कुछ भी" नहीं करते हो। अपनी सारी कमाई अपने परिवारजनों या अपने दोस्तों पर ही उड़ाते रहते हो, मेरे लिए कभी "कुछ भी" नहीं लाते। क्या मैं आपकी "कुछ भी" नहीं लगती ?

10. *सेवानिवृत्ति के पश्चात्:* अपने ही पुत्र और पुत्रवधु कहने लगते हैं ये बुड्ढे/बुढ़िया "कुछ भी" नहीं करते सारा दिन हमें परेशान करते रहते हैं। जब देखो तब "कुछ भी" फरमाइश करते रहते है। बुड्ढे ने अपने पैसों में से हमें "कुछ भी" नहीं दिया, सारे पैसों पर साँप की तरह कुण्डली मार कर बैठा हैं। जब तक ये उपर नहीं जायेगा इसके पैसों में से हमें "कुछ भी" नहीं मिलेगा। हे ईश्वर। इसे जल्दी से अपने पास बुला ले ताकि हमें भी कुछ मिल सके और हम "कुछ भी" कर सकें।

11. *देहावसान पर:* श्मशान घाट पर पुत्र घड़ियाली आँसू बहाते हुये कहता है पिताजी आप हमें अकेला छोड़ कर क्यों चले गये, हमें तो अभी आपकी बहुत अधिक आवश्यकता थी। हमें आपका "कुछ भी" नहीं चाहिये। आपका "कुछ भी" आपकी कमी पूरी नहीं कर सकता। पर अन्दर ही अन्दर प्रसन्न हो कर कहता है, "अच्छा है, बुड्ढा जल्दी उपर चला गया, अब इसका जो "कुछ भी" है, सब मेरा है और मैं "कुछ भी" कर सकता हूँ।"

व्यक्तिगत जीवन के अतिरिक्त हमें हमारे सामाजिक जीवन एवं जीवन के अन्य आयामों में भी इस "कुछ भी" की उपस्थिति स्पष्ट परिलक्षित होती है:–

1. सरकारी राशन की दुकान पर जाइये: सब कुछ खत्म हो गया है "कुछ भी" नहीं बचा है।

2. सरकारी अस्पताल में जाइये: न डाक्टर है, न नर्से हैं और न दवाईयाँ हैं, "कुछ भी" नहीं है और जो "कुछ भी" हैं वो बिना "कुछ भी" दिये "कुछ भी" नहीं मिलेगा।

3. न्यायालय में चले जाइये: यदि आपने चपरासी, पेशकार और ऊपर तक "कुछ भी" नहीं दिया तो आपको अन्याय के अलावा "कुछ भी" नहीं मिलेगा

और यदि आपने "कुछ भी" दे दिया तो आपका 'कुछ भी' कार्य सुगमता से हो जायेगा और यदि आपके विरोधी ने आपके "कुछ भी" से अधिक "कुछ भी" दे दिया तो आपके स्थान पर वह "कुछ भी" करा लेगा अर्थात् कार्य का होना या न होना या आपके स्थान पर आपके विरोधी का कार्य होना, सब कुछ आपके "कुछ भी" पर निर्भर करेगा।

4. सरकारी कार्यालय में जाइयेः आपने चपरासी को "कुछ भी" दे दिया, आप अधिकारी से जब भी मिलना चाहेंगे, मिल सकेगें। आपने चपरासी को "कुछ भी" नहीं दिया तो अधिकारी उपस्थित होते हुए भी आप को कभी उपलब्ध नहीं हो पायेंगे।

आपने बाबू को "कुछ भी" नहीं दिया तो आपकी पत्रावली गुम हो जायेगी। आपका कार्य आगे नहीं बढ़ पायेगा, आप कार्यालय के चक्कर पर चक्कर लगाते रहेगे। आपने बाबू को "कुछ भी" दे दिया, आप जब भी कार्यालय में जायेंगे तो बाबू आप के स्वागत के लिये हमेशा उपस्थित रहेगा। आप की पत्रावली हमेशा अविलम्ब उपलब्ध रहेगी। आप के कार्य में कभी किसी प्रकार की रुकावट नहीं आयेगी। इस "कुछ भी" के प्रभावस्वरूप आप का कार्य होने पर बाबू स्वयं आप को इस बारे में सूचित करेगा।

आपने अधिकारी को "कुछ भी" नहीं दिया तो अधिकारी आपके कार्य के लिये कभी उपलब्ध नहीं हो पायेगा। आप का कार्य नियमों—उपनियमों के चक्रव्यूह में फँस कर रह जायेगा। आपने अधिकारी को "कुछ भी" दे दिया तो अधिकारी यदि अवकाश पर भी होंगे तो आपके कार्य के लिये कार्यालय में अवश्य उपस्थित होंगे, आप का कार्य सबसे पहले होगा। इस "कुछ भी" की महिमा से सारे नियम—उपनियम काल कोठरी में कैद हो जायेंगे और आपका कार्य यदि नियमानुसार नहीं होने योग्य है, तो भी हो जायेगा।

5. नेता को चुनाव में जनता ने "कुछ भी" (वोट) नहीं दिया तो नेता सत्ता के अकल्पनीय सुख से वंचित हो कर "कुछ भी" नहीं हो जाता है और अपने चाहने वालों के लिये भी "कुछ भी" नहीं कर पाता है। पर यदि चुनाव में जनता ने नेता को "कुछ भी" दे दिया तो नेता सत्ता सुख को प्राप्त कर के "कुछ भी" हो जाता है और अपने चाहने वालों के लिये "कुछ भी" कर सकता है।

6. बेटी को दहेज में यदि "कुछ भी" नहीं दिया तो लोभी—लालची ससुराल वालों द्वारा बेटी को जला कर मार दिया जाता है और यदि "कुछ भी" दे दिया तो बेटी के सुखी जीवन की तो कोई गारंटी नहीं, पर यह आपके द्वारा दिया गया "कुछ भी" उन्हें आगे आपसे और "कुछ भी" माँगने के लिये आधार बन जाता है। यह "कुछ भी" यहाँ इतना प्रभावशाली है कि यहाँ इसकी अनुपस्थिति मानव को अमानव बना देती है।

7. इस "कुछ भी" का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है, और इस पर अभी भी "कुछ भी" लिखा जा सकता है। परन्तु इस "कुछ भी" को कुछ मर्यादित करना भी अत्यन्त आवश्यक है। अतः मैं और "कुछ भी" न कहते हुये इस "कुछ भी" को यहीं विराम देता हूँ और यदि इस "कुछ भी" को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुये मुझसे "कुछ भी" अशिष्टता हुई हो तो मैं आप सभी से क्षमा चाहता हूँ।

मानव, कर्मयोग तथा उसका कर्त्तव्य

बी0एल0 शर्मा
पंजाब एण्ड सिंध बैंक के पास,
कौलागढ़, देहरादून

सकाम कर्म वह है जो फल प्राप्ति की इच्छा से किया जाता है, यह बन्धन मे डालने वाला है, इनका फल भोगने के लिये जीव को शरीर धारण कर संसार में आना पड़ता है और सुख, दुख, मरण, व्याधि भोगना पड़ता है ।

निष्काम कर्म वह है जो निष्काम भाव से बिना किसी फल की इच्छा रखते हुये दूसरे के हित के लिये किया जाता है अथवा परोपकार के भाव को दृष्टिगत रखते हुये किया जाता है।

प्रभु ने सृष्टि बनाई समस्त चेतन प्राणियों में सर्वोत्तम मनुष्य योनि में कर्मेन्द्रियाँ, ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, अन्तःकरण, अनुपम साधन देकर तथा जीवात्मा को उसका अधिष्ठाता बनाते हुये ''त्यक्तेन भुंत्र्जीथा'' की भावना से निष्काम कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करे। ऐसा यह प्रभु का आदेश ''यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय में स्पष्ट रूप से मनुष्य के लिये दिया गया है

''कुर्वन्नेह कर्माणि जिजीविषेच्छतूँ समाः । एवं त्वविनान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरेः'' ।। (यजु0 40/12) हे जीव ! तू इस संसार में निष्काम कर्मों को करता हुआ सौ वर्ष तक जीने की इच्छा कर । इस प्रकार निष्काम कर्म, फल में अनासक्त भाव रखते हुये तुझे, ये कर्म लिप्त नही होंगे अर्थात तेरे लिये बन्धन नही बनेंगे । वेद का स्पष्ट आदेश है कि मनुष्य कर्मशील बनें, साथ ही वेद यह भी आदेश करता है

''उद्यान ते पुरुषः नावयानमः'' ।। हे पुरुष ! तूने पुरुषार्थ, कर्म करते हुये उन्नति की ओर चलना है न कि अवनति की ओर, ज्ञान से पुरुषार्थ कर्म करते हुये अपने ज्ञान को आगे बढाना है, उसको सीमित नही रखना है । शिव सूत्र कहता है –''ज्ञानम बन्धः'' ।। सीमित ज्ञान बन्धन है क्योंकि वह सीमित सत्ता में रहकर सीमित व्यवहार करता है अतः वह अपूर्ण है, उसमें सुख नहीं। उसकी निरन्तर वृद्धि होती रहनी चाहिये तभी वह मनुष्य के उत्थान में सार्थक सिद्ध हो सकता है ।।

''मानस शास्त्र में कर्म के विषय में ऐसा कहा गया है –कर्म प्रधान विश्व रचि राचा । जो जस करहि सो तस फल चाखा''।। सृष्टिकर्ता ने समस्त विश्व के मनुष्यों के लिये कर्म की रचना की है जो जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है । इस युक्ति वचन से ईश्वर न्यायकारी सिद्ध होता है तथा पक्षपातरहित है । मानव जीवन में कर्म की प्रधानता है। कर्म करना मनुष्य का स्वभाव है । मनुष्य कर्म करने में

स्वतन्त्र है पर फल भोगने में परतन्त्र है क्योंकि फल ईश्वर के अधीन है। कर्मफल के भोग से मनुष्य बच नहीं सकता, ऐसा उपनिषद के ऋषि का वचन है–

"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम" ।। (वृहद0 उप0 वचन) शुभाशुभ कर्मों का फल तो अवश्य ही भोगना पड़ता है । वेदान्त भी कर्म फल भोग की पुष्टि करते हुये यह स्पष्ट घोषणा करता है–

"ना भुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटि शतैरपिः । अर्थात् कल्पान्तर में भी कर्म का फल भोगना ही पड़ेगा । ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेयइन तीनों के संयोग से कर्म में प्रवृत्त होने की इच्छा होती है। कर्त्ता, कारण और क्रिया इन तीनों के संयोग से कर्म बनता है । फल के बिना प्रवृति नहीं होती अर्थात् मनुष्य कार्य में नही लगता । तीन प्रकार के कर्म (1) कायिक (2) वाचिक एवं (3) मानसिक अर्थात शरीर, मन और वाणी द्वारा कर्म व्यावहारिक रूप में मनुष्य द्वारा किये जाते हैं । प्रकृति के अनुसार शास्त्र विधि से नियत किये हुये जो वर्णाश्रम के धर्मस्वरूप स्वाभाविक कर्म है उन्हें ही "स्वधर्म" "सहज कर्म" "स्वकर्म" "नियतकर्म" "स्वभावजकर्म" और "स्वभावनियतकर्म" नाम से गीता कार भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है । कर्म के प्रकार सकाम और निष्काम कर्म ।

सकाम कर्म वह है जो फल प्राप्ति की इच्छा से किया जाता है, यह बन्धन में डालने वाला है, इनका फल भोगने के लिये जीव को शरीर धारण कर संसार में आना पड़ता है और सुख, दुख, मरण, व्याधि भोगना पड़ता है ।

निष्काम कर्म वह है जो निष्काम भाव से बिना किसी फल की इच्छा रखते हुये दूसरे के हित के लिये किया जाता है अथवा परोपकार के भाव को दृष्टिगत रखते हुये किया जाता है।

वेदान्त में कर्म फल प्राप्ति की दृष्टि से तीन भेद– **प्रारब्ध, संचित** एवं **क्रियमाण** ।

प्रारब्ध–वर्तमान मे जिन शुभाशुभ कर्मों का फल सुख दुःख के रूप में हमें प्राप्त हो रहा है वे हमारे पूर्व में किये गये कर्म हैं ।

संचित–संचित कर्म वे हैं जो किसी भण्डार घर में संचित हो कर प्रसुप्त पड़े रहते हैं और भविष्य में प्रकट होने व फल देने में अपने बारी की प्रतीक्षा करते रहते हैं फिर भी यह कहना कठिन है कि वे कौन से जन्म में प्रकट होकर फल देंगे ।

क्रियामाण–क्रियामाण कर्म वे है जिन्हें हम वर्तमान में कर रहे होते हैं और वे जो संचित बन कर भण्डार घर में जमा होते हैं और अंत में वे ही प्रारब्ध का रूप धारण कर समय पर फलदायी सिद्ध हो जाते हैं । वस्तुतः कर्म बीज के समान है और कर्म की गति भी अति गहन है। सुख, दुःख, शरीर, योनि, स्वर्ग, नरक, रोगादि कर्म का परिणाम व फल हैं ।

गीताकार श्री कृष्ण ने इसीलिये यह कहा है "कर्मणोह्यापि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः । अकर्मणश्च बौद्धव्यं गहना कर्मणोगति" । (गीता 4/17) कर्म और अकर्म का स्वरूप मनुष्य को कर्म करने से पहले जान लेना चाहिये क्योंकि कर्म की गति गहन है।

मनुष्य में ज्ञान और अज्ञान दोनों विद्यमान रहते हैं इसी से वह कर्म के परिणामस्वरूप दुःखव्याधि भोगता है। कर्म से ही शरीर भोग और आयु प्राप्त होती है। मनुष्य जब कर्म करता है तब कर्म वासना के रूप में चित्त में अंकित हो जाता है इन्हीं वासनाओं की रेखाओं को कर्म की रेखा कहते हैं। वासनाओं की रेखाओं के क्षय या मिटे बिना मुक्ति तथा जन्ममरण चक्र से बच पाना सम्भव नहीं।

कर्म के स्वरूप

कर्म – जिस कर्म का फल इहलोक और परलोक में सुख व शाँतिदायक होता है उस क्रिया का नाम कर्म है। यह सत्व व रजोगुणमिश्रित प्रधान है।

विकर्म – जिसका फल इहलोक एवं परलोक में दुख अशांति, शोक, संतापादि देने वाला होता है उसका नाम विकर्म है। यह तमोगुण प्रधान है।

अकर्म – जो कर्म निष्काम भाव से फल में आसक्ति न रखते हुये केवल कर्तव्य की भावना से अथवा कर्त्तापन के अभिमान लाये बिना परहित तथा समष्टि कल्याणहित के लिये तथा ईश्वर की प्रीति के लिये किये जाते हैं उन्हें ''अकर्म'' कह सकते हैं। ये कर्म मनुष्य को बंधन में डालने वाले नही होते यह सत्वगुण प्रधान है। "यही कर्म कौशलम है"।

ईश्वर, जीव, प्रकृति उसके गुण कर्म स्वभाव ये अनादि हैं। कर्म की कुशलता व सफलता ज्ञान का आश्रय लेना तथा ''चित्त की वृत्तियों का निरोध'' करते हुये मन को निश्चल करते हुये मन और बुद्धि दोनों को कर्म में संयुक्त करते हुये तथा ईश्वर का आश्रय लेकर उस कर्म को ईश्वर को ही अर्पण कर देना इस पर विशेषकर निर्भर करती है ऐसा अनुभवी कर्मयोगियों का निजी अनुभव है। चित्त की वृत्तियों के निरोध हुये बिना अर्थात् चित्त की एकाग्रता हुये बिना अथवा मन को निश्चल किये बिना तथा मन और बुद्धि को कर्म में संयुक्त किये बिना ''कर्मसु कौशलमः'' चाहे कोई सा कर्म अथवा योग क्यों न हो, सिद्ध व सफल नहीं हो सकता। इसलिये महर्षि पतंजलि ने योग सूत्र की व्याख्या में योग की यह व्याख्या दी है (योगदर्शन, योग सूत्र 2) योग्श्चचित्त वृत्ति निरोधः।। चित्त की वृत्तियों का निरोध अर्थात् रोकना तथा मन को स्थिर कर लेना ही योग है। यह सिद्धि के लिये आवश्यक है।

जो कर्म में लिप्त नहीं होता ''नकर्म लिप्यतेनरे" वही नर है। "नयति इतिनरः''। आदर्श नर वह है जो दूसरों का मार्गदर्शन करते हैं। अनासक्त भाव से कर्म फल की इच्छा न रखने वाले ही "नर" हैं शेष सभी श्वाँस–प्रश्वाँस प्राणवायु की संचार क्रिया करने वाले तथा आहार का भोग करने वाले मानव सजीव अन्य प्राणियों के समान है।

उपनिषद् में ऋषि कहते हैं–उतिष्ठत् जाग्रत प्राप्य वरानिबोधतः" (कठः 3/14)। उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषों ज्ञानियों का सत्संग पाकर श्रेष्ठ शास्त्रयुक्त कर्म करते हुये अनासक्त भाव से फल में आसक्ति न रखते हुये ज्ञान को प्राप्त करो तदनुसार ज्ञान की वृद्धि करते हुये उन्नतशील बनो तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति जो प्रत्येक मानव के लिये आवश्यक है, उसकी प्राप्ति के लिये यत्नशील हो क्योंकि ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग इन तीनों के सिवाय, हे मनुष्यों दूसरा कोई कल्याण का मार्ग नहीं है''। अतः ''वेद भगवान की आज्ञानुसार "श्रेष्ठतमाय कर्मणः श्रेष्ठतमः'' (यजुर्वेद का प्रथम मंत्र) कर्म करने में प्रवृत्त हो जाओ वेद के अनुसार श्रेष्ठतम कर्म उन्हीं को कहा जा सकता है, सत्य का ग्रहण असत्य का परित्याग, सत्याचरण, सत्यव्यवहार, अन्तःकरण की शुद्धि, इन्द्रिय निग्रह, अक्रोध, दया, करुणा क्षमाशीलता, अहिंसा, धैर्य, संतोष, त्याग, शांति तप, स्वाध्याय, यज्ञ, उपासना, विद्वानों का संग, अनात्म पदार्थो के प्रति उदासीनता बरतना, अविद्या का त्याग, विद्या उपनिषदों आदि संत शास्त्रों का अध्ययन, चिन्तन, मनन, आचरण, ईश्वर प्रणिधान सद्गुणों का ग्रहण, अशुभ कर्मों का त्याग, शुभ कर्मों का आचरण, यम–नियम का पालन करना, सुखी मनुष्य में मित्रता, दुखियों पर करूणा, पुण्यात्माओं पर हर्ष, कुसंग तथा दुष्ट व्यसनी मनुष्य से बचना सब में समदृष्टि भाव रखते हुये व्यवहार करना, विचारों की शुद्धि, शिष्टाचार, माता–पिता व गुरूजनों आदि की सेवा, वाणी का संयम, परोपकार, दान

तथा अपने धर्म अनुष्ठान स्वधर्म पालनादि ये मनुष्य के लिये इनका आचरण करना शास्त्रों में निर्देशित किया गया है। इन सबका आचरण करते हुये मनुष्य अपना व दूसरों का कल्याण कर सकता है तथा समाज का का मार्गदर्शन कर सकता है ।

वर्तमान भौतिक युग में बढ़ती हुई आबादी को देखते हुये प्रकृति के बिगड़ते हुये पर्यावरण के असंतुलन को देखते हुये पशु–पक्षी वनस्थली के वृक्ष–वनस्पति वहाँ के वन्यजीवों के अस्तित्व को बनाये रखना तथा उन्हें उनमें आत्मदृष्टि रखते हुये संरक्षण प्रदान करते रहना उनसे प्रेममय व्यवहार बनाये रखना ईश्वर की सृष्टि में वह मानव द्वारा ईश्वरीय कार्य है क्योंकि भगवान कृष्ण गीता में कहते हैं–

योमा पश्यति सर्वत्र सर्वे च अपिः मयिपश्यति । तस्यांह न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ।। (गीता 6/30) जो सर्वत्र मुझको और सबको मुझ में देखता है। मैं उससे कभी भी अलग नहीं होता और वह मुझसे कभी भी अलग नहीं होता। जो ऐसा सब प्राणियों को एक समान देखता हुआ व्यवहार करता है, व सत्य ही देखता है। चेतन आत्मा सर्वव्यापक है भगवान कृष्ण कहते हैं–मै सब का आत्मा हूँ। वनस्पति, वृक्ष, फूल, पत्तियों समस्त प्राणियों में मैं ही हूँ । अपूत्थ सर्व वृक्षाणां । (गीता 10/26 वृक्षों में मैं पीपल का वृक्ष हूँ । पीपल के वृक्ष की मूल में उन्होंने चेतन आत्मा का वास बताया है। वनस्पति वृक्ष की वृद्धि हरी भरी होना, श्वाँस–प्रश्वाँस प्राणन क्रिया का संचार बने रहने से समस्त प्राणियों से वनस्पति वृक्ष तक में वृद्धि होती है। जड़ें जो जमीन से रस खींचती हैं, उससे वृद्धि होती है। इसी प्रकार पशु–पक्षी में भी गीताकार भगवान कृष्ण ने अपनी आत्मा का वास होना बताया है–''मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणामः ।।'' (गीता 10/30) पशुओं में मैं मृगराज (सिंह) और पक्षियों में गरुड़ मैं हूँ। मैं सर्वत्र व्यापक हूँ, सब का आत्मा हूँ । अथर्ववेद का महावाक्य आत्मा की पुष्टि करता है–''अयमात्मा ब्रह्मः''। "जन्माद्यस्य यतः" । (वेदान्त सूत्र) ब्रहम वह है जिससे समस्त सृष्टि जन्मती है और कल्प के अंत में उसी में विलय हो जाती है।

परब्रह्म की चेतन आत्मा सब प्राणियों से वनस्पति आदि तक में सर्वव्यापक है उसकों वहाँ देखने के लिये ज्ञान चक्षुओं का होना आवश्यक है। स्थूल चक्षुओं से उस सूक्ष्म आत्मा को नहीं देखा जा सकता। स्थूल चक्षुओं से स्थूल वस्तु ही देखी जा सकती है सर्वव्यापक आत्मा के विषय में एक शायर ने अपनी शायरी में ऐसा कहा हैः–

''रोशन हैं मेरे जलवे हर एक शै में लेकिन,
है चश्म कोर तेरी क्या कसूर है मेरा''।

(आत्मा सर्वव्यापक है, समस्त प्राणियों से वनस्पति फूल, वृक्षादि चींटी तक में, उसे केवल ज्ञान चक्षुओं द्वारा ही जाना पहचाना जा सकता है। अंत में मानव के लिये यही सर्वोत्तम संदेश हैः–

''ओऽम् असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योर्तिगमयः। मृत्योमऽमितंगमयः''। (शतपथ ब्राह्मण)" हे परमात्मा! तुम मुझे असत्य से पृथक कर सत्य में स्थापित करो तथा अज्ञान व अविद्या को मेरे अन्तर से हटा कर शुद्ध विद्या ज्ञान का प्रकाश करो तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जा कर कल्याण करो।

ओऽम् शांतिः शांतिः शांति

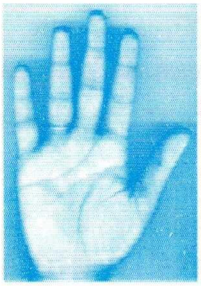

क्या ज्योतिष शास्त्र पर विश्वास करना अंधविश्वास हैं ?

पं0 पी0के0 मुखर्जी
भा.व.सं., देहरादून

प्रायः यह कहते हुये सुना है कि वे ज्योतिष शास्त्र में विश्वास नहीं करते हैं और इस शास्त्र पर आस्था रखना अंधविश्वास है। इस तथ्य को मद्देनज़र रखते हुये मेरे मस्तिष्क में इस लेख को लिखने का विचार आया । जब उनसे यह पूछा गया कि क्यों वे इसमें आस्था नहीं रखते और इसे अंधविश्वास वाला शास्त्र कहते हैं ? तब उनके पास इस सवाल का जबाब नहीं था। वास्तविकता यह है कि उन्हें ज्योतिष के विषय में कोई जानकारी नहीं होती जिसके कारण वे इस शास्त्र को अनुचित ठहराते हैं।

सदियों से हमारे देश में ज्योतिष का प्रचार–प्रसार चला आ रहा है। यहाँ तक कि रामायण काल में राजा दशरथ द्वारा भी इस शास्त्र की खरी कसौटी को कसा गया था। उदाहरण स्वरूप राजा दशरथ ने अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व कौशल्या से कहा था कि मेरा नक्षत्र सूर्य, मंगल एवं राहु ग्रहों से पीड़ित होने लगा है, अतएव भाग्य में कोई भयंकर विपत्ति आने वाली है। इसी दौरान श्रीरामचन्द्र जी का 14 वर्षों का वनवास भी हुआ। अतः यह ज्योतिष शास्त्र की प्रामाणिकता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

प्राचीन काल से ही राजा–महाराजाओं द्वारा युद्ध व शिकार पर जाने से पूर्व, आक्रमण का मुहूर्त एवं अनेक विविध कार्यों में ज्योतिष विज्ञान का सद् उपयोग किया जाता रहा है। सही मायने में ज्योतिष शास्त्र वह चक्षु है जो किसी मानव या देश के भूत, वर्तमान एवं भविष्य के सम्बन्ध में दिग्दर्शन करता है, बशर्ते इस कार्य में प्रयुक्त आँकड़े जैसे जन्मतिथि, जन्म समय एवं जन्म स्थान सटीक हो। इसके अलावा जिस विद्वान से परामर्श लिया जा रहा हो, उसे ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्तों एवं नियमों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये, जिससे वह जरूरतमन्द लोगों को सही दिशा दिखा सके और ज्योतिष शास्त्र को अंधविश्वास वाला शास्त्र कहलाने से मुक्ति दिला सके।

वर्तमान समय में समाज के विभिन्न वर्गों के लोगों को प्रायः यह कहते हुये सुना है कि वे ज्योतिष शास्त्र में विश्वास नहीं करते हैं और इस शास्त्र पर आस्था रखना अंधविश्वास है। इस तथ्य को मद्देनज़र रखते हुये मेरे मस्तिष्क में इस लेख को लिखने का विचार आया । जब उनसे यह पूछा गया कि क्यों वे इसमें आस्था नहीं रखते और इसे अंधविश्वास वाला शास्त्र कहते हैं ? तब उनके पास इस सवाल का जबाब नहीं था। वास्तविकता यह है कि उन्हें ज्योतिष के विषय में कोई जानकारी नहीं होती जिसके कारण वे इस शास्त्र को अनुचित ठहराते हैं। इसी तारतम्य में जनसाधारण को ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान होना आवश्यक है। ज्योतिष–विज्ञान में ग्रहों का महत्वपूर्ण योगदान है। कहने का तात्पर्य यह है कि ज्योतिष की नींव ही ग्रह हैं। बिना ग्रहों के सहयोग से

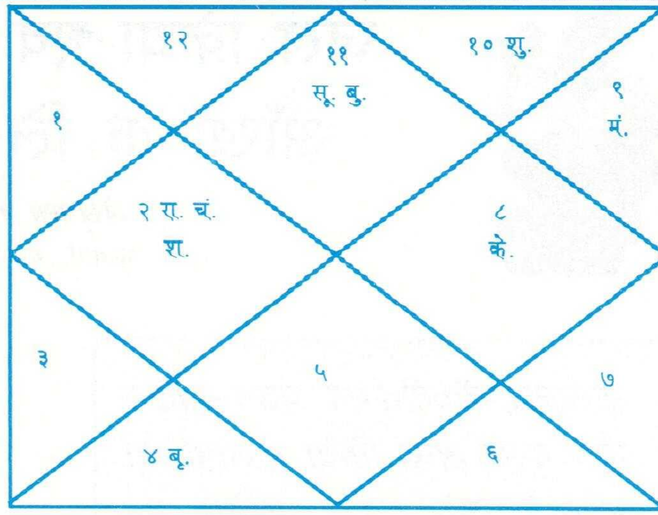

ज्योतिष पर—कटे पक्षी की भाँति हैं, वास्तव में ज्योतिष एक विज्ञान है। इसका साक्षात्कार व प्रत्यक्ष अनुभव तपः पूत ऋषियों व ऋषि तुल्य मेधा सम्पन्न आचार्यों ने अपनी स्वयं सिद्ध प्रज्ञा से बहुत पुराने काल में ही कर लिया था। आकाश मण्डल में स्थित ग्रहों की राशि चक्र में बारह राशियाँ—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन है। इसके अतिरिक्त सात ग्रह— सूर्य, चन्द्र, मंगल, बृहस्पति, शनि, बुध, शुक्र और दो छाया ग्रह राहु—केतु होते हैं। हाल ही में, गत दिसम्बर 1999 में आकाश में ईलिप्स के प्रकट होने से पृथ्वी से सबसे दूर स्थित ग्रह प्लूटो, यूरेनस और नेपच्यून की दूरी इस धरती से कम हो गई है। जिसके कारण इन ग्रहों का मानव जीवन पर प्रभाव पड़ने लगा है और ज्योतिष शास्त्र में इन ग्रहों के प्रभाव को मान्यता खगोल शास्त्रियों द्वारा दे दी गई है। जैसे—जैसे समय व्यतीत होता जा रहा है, वैसे—वैसे मानव जीवन की विभिन्न समस्याएं बढ़ती जा रही हैं जिसके फलस्वरूप वह देवज्ञों से अपनी समस्याओं के समाधानार्थ परामर्श लेते रहते हैं। आज हमारे देश के विभिन्न टी0वी0 चैनलों, पत्र—पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में जोर—शोर से प्रचार—प्रसार किया जा रहा है और इसकी उपयोगिता को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया जा रहा है। भारत—सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा भी इस शास्त्र को विश्वविद्यालय में पढ़ाने के लिये मंजूरी दी गई है। अनेक वर्षों से ज्योतिष की शिक्षा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, तेलगू विश्वविद्यालय, कामराज विश्वविद्यालय, तमिलनाडु, लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी इत्यादि शिक्षा केन्द्रों में प्रदान की जा रही है। इसके अलावा अनेक स्वयंसेवी संस्थायें इस दिशा में कार्यरत हैं। वर्तमान समय में ज्योतिष के अतिरिक्त ऐसा कोई सशक्त माध्यम नहीं है, जो मानव जीवन की विविध समस्याओं के विषय में सही मार्गदर्शन दे सके। अतः समय की पुकार है कि इस शास़्त्र का अधिक से अधिक सदुपयोग किया जाये और किसी योग्य विद्वान ज्योतिषी से ही परामर्श लेना चाहिए, न कि सड़कछाप ज्योतिषी से, जिससे ज्योतिष शास्त्र को अनुचित कहलाने से बचाया जा सके।

आकाश मण्डल में स्थित ग्रहों की राशि चक्र में बारह राशियाँ—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन है। इसके अतिरिक्त सात ग्रह— सूर्य, चन्द्र, मंगल, बृहस्पति, शनि, बुध, शुक्र और दो छाया ग्रह राहु—केतु होते हैं।

जल क्रिया एवं सूत्र नेति : आँखों के लिये वरदान

लेखनाथ शर्मा
भा.व.सं., देहरादून

कम्प्यूटर, टी०वी० एवं पठन–पाठन जैसे दूसरे अन्य क्रिया कलापों का आँखों की दृश्य शक्ति पर अत्यधिक दुष्प्रभाव पडता है। स्वाभाविक शारीरिक प्रतिरोध शक्ति के अनुसार नेत्रों की क्षमता भी सीमित होती है और इनका इस शक्ति से अधिक उपयोग करने से ह्रास होता है और इसके फलस्वरूप हमें नेत्र रोग होते हैं, जिसमें चश्मा लगाना एक सामान्य सी बात है ।

आधुनिकता की दौड़ में शामिल मानव अत्यधिक सुविधाभोगी होता जा रहा है। सामान्य से उदाहरण हर ओर देखने को मिल जाते हैं, जैसे – यदि किसी व्यक्ति को समीप का भी कोई कार्य करना है तो वह शीघ्रता से करने के लोभ में पैदल जाने के बजाय अपने दुपहिया वाहन का प्रयोग करता है या फिर साधारण गणना के लिये वह अपने मस्तिष्क के स्थान पर कैलकुलेटर या कम्प्यूटर का उपयोग करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज का मनुष्य बिना विचार किये दिन प्रतिदिन नवीनतम सुविधाओं के मायाजाल में जकड़ता जा रहा है, चाहे उसके परिणाम कुछ भी क्यों न हो? यहाँ यह कहना प्रासंगिक होगा कि विशेष आवश्यकता पड़ने पर इन सुविधाओं का उपयोग करना उचित होगा किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि वह गैर जरूरी या समान्य स्थितियों मे भी इन सुविधाओं का उपयोग कर स्वयं को इनका गुलाम बनाता जा रहा है ।

उपरोक्त उदाहरणों में समीप के कार्य के लिए वाहन का उपयोग करना, पैदल चलने जैसे व्यायाम के लाभ से स्वयं को वंचित करना है या फिर कैलकुलेटर का प्रयोग करके वह अपने मस्तिष्क को निष्क्रियता की ओर ले जाता है। कुल मिलाकर सार यह है कि इन सब सुविधाओं के बीच रहकर मनुष्य अपने शरीर और स्वास्थ्य के प्रति उदासीन होता जा रहा है । यदि कोई अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होता भी है, तो वह आधुनिक हैल्थ क्लब या जिम इत्यादि की सेवायें लेता है । जो मनुष्य को मात्र बाह्य रूप से बलिष्ठ, सुगठित व आकर्षक दिखाने में सहायक होता है परन्तु उससे मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों का वर्धन नहीं के बराबर होता है। हम इन आधुनिक सेवाओं की उपस्थिति से अपने प्राचीन ज्ञान को विस्मृत करते जा रहे हैं । प्राचीन काल से हमारे योगाचार्यों ने जो क्रियायें व आसन बताये हैं, वे मनुष्य को आन्तरिक एवम् बाह्य दोनों तरह से मजबूत करते हैं । यूँ तो योग में सभी प्रकार की व्याधियों के लिये उपाय सुझाये गये हैं । परन्तु प्रसंगवश आँखों के लिये उपयोगी योग क्रियाओं की जानकारी देने का प्रयास किया जा रहा है ।

हम सभी अपने अधिकतर कार्यों में आँखों की मदद लेते हैं, विशेषतः कम्प्यूटर, टी०वी० एवं पठन–पाठन जैसे दूसरे अन्य क्रिया कलापों का आँखो की दृश्य शक्ति पर अत्यधिक दुष्प्रभाव पडता है। स्वाभाविक शारीरिक प्रतिरोध शक्ति के अनुसार नेत्रों की क्षमता

भी सीमित होती है और इनका इस शक्ति से अधिक उपयोग करने से ह्रास होता है और इसके फलस्वरूप हमें नेत्र रोग होते हैं, जिसमें चश्मा लगाना एक सामान्य सी बात है। मेरे व्यक्तिगत अनुभव से योग की दो क्रियाएँ – जलक्रिया एवम् सूत्रनेति – ऐसी दो क्रियाएँ हैं जो आँखों के लिए अत्यन्त लाभकारी है। इनको लगातार करते रहने से नेत्र ज्योति यथावत् बनी रहती है और सामान्य विकृतियों में चश्मा भी उतर जाता है । यद्यपि उपरोक्त योग आँखों के लिए विशिष्ट है, परन्तु इनसे नाक, कान, और गले के रोगों को दूर करने में भी विशेष लाभ होता है ।

1. जल क्रिया

विधि : टोंटीदार लोटे में छना हुआ उष्ण अथवा शीतल जल, नमक मिला हुआ, मौसम या स्वास्थ्यानुसार भरें । रीढ़ को सीधा रखते हुए बैठें। सिर को बाँई ओर झुकाते हुए दाँये हाथ में टोंटी वाला लोटा पकड़ कर नासिका के दायें छिद्र में रखकर लोटे की ओर देखें। मुँह से साँस लेते रहें। ऐसा करने से जल स्वतः बाई नासिका से गिरने लगेगा। ऐसे ही फिर दूसरी नासिका से भी करें । इस प्रकार नासिका के दोनों छिद्रों से 750 मिलीलीटर से 1 लीटर तक जल निकालना चाहिए।

लाभ : जल क्रिया करने से नासिका के कृमि जो प्रायः श्वास द्वारा नाक में पहुँचते हैं और वहीं पर मर जाने के कारण अनेक रोग पैदा करते हैं, जल क्रिया से यह कृमि धुल जाते हैं और नासिका से स्वच्छ वायु संचार होने लगता है । स्वच्छ नासिका द्वारा साँस लेने से मस्तिष्क की नसों को स्वच्छ ऑक्सीजन प्राप्त होती है। उष्ण जल से वायु विकार एवं शीत जल से पित्त विकार दूर होते हैं। इसके अतिरिक्त इस क्रिया को करने से माँस, हड्डी का बढ़ना इत्यादि रोग उत्पन्न नहीं होते। जलक्रिया से मस्तिष्क की नसें शुद्ध होती हैं एवं स्मरण शक्ति बढ़ जाती है। सिरदर्द से मुक्ति मिलती है। सर्वोपरि आँखों की ज्योति में वृद्धि होती हैं। नजला, जुकाम आदि रोग जड़ से समाप्त होते हैं। श्रवण शक्ति बढ़ती है एवं दाँतों को भी लाभ होता है ।

2 . सूत्र नेति

विधि : सूत्रनेति सूत की 2 से 5 मिमी त्रिज्या की डोरी होती है जो योग आश्रमों या आयुर्वेदिक दवा विक्रेता के पास उपलब्ध होती है। नव–अभ्यासी रबड़ की नेति से आरम्भ कर सकते हैं। एक लोटे में पानी भरकर पैरों के बल कमर को सीधा रखकर नेति हाथ में लेकर बैठें। फिर नेति को जल में भिगोकर दोनों हाथों से इस प्रकार पकड़ें कि बायाँ हाथ नेति के उपरी सिरे की ओर रहे और दाहिना हाथ उसके नीचे। दाहिने हाथ का अँगूठा और उसके साथ की दो अँगुलियाँ तथा इसी प्रकार बायें हाथ द्वारा नेति को सीधी खड़ी रखते हुए नासिका के एक छिद्र में धीरे–धीरे सरकायें। जब नेति गले के पास पहुँच जाए तो दाहिने हाथ के अँगूठे के साथ वाली दोनों अँगुलियों से पकड़कर नेति का सिरा मुँह से बाहर नाक से ही लौटा देना चाहिये। इसी प्रकार दूसरे छिद्र से भी नेति करनी चाहिए।

लाभ : जलक्रिया की भाँति सूत्रनेति से भी आँख, कान, नाक, गले और मुँह के लिए अत्यन्त लाभकारी है। उपरोक्त अंगों की समस्त व्याधियाँ समूल नष्ट करता है । सूत्रनेति करने से मस्तिष्क सुचारू रूप से कार्य करता है, जिससे मनुष्य की कार्य करने की क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि होती है । साथ ही हिस्टीरिया, मिर्गी इत्यादि रोगों के होने की सम्भावना ही नहीं रहती। नेति के दबाव से कफ वाली नाड़ियाँ साफ हो जाती हैं जिससे तालु – स्थान में अमृत रस उत्पन्न करने वाली नसें शुद्ध होकर अमृत रस उत्पन्न करने योग्य बन जाती हैं।

यद्यपि विधि पूर्ण व सरल है तथापि नेति इत्यादि किसी कुशल योगाभ्यासी की देखरेख में ही प्रारम्भ करें।

करत–करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान ।
रसरी आवत जात ही, सिल पर परत निशान ।।

परम्पराओं की कटी पतंग कहाँ गिरेगी ?

सुधा जैन
तिलक रोड, देहरादून

इक्कीसवीं सदी में जहाँ मानव इतना गतिमान, विकोसान्मुख एवं उन्नतिशील हो गया है, वहाँ मेरा विचार है कि हम अपने मन, प्रवृत्ति और आदर्शों से पूरी तरह परम्परावादी है। जो विचारों से प्रगतिशील हैं वे भी व्यावहारिकता एवं वास्तविकता में परम्परावादी है, नये–नये विचार हमें अच्छे लगते हैं, आकर्षित करते हैं, परन्तु उन नये विचारों को व्यावहारिकता में लाने से एक अनजाना भय और असुविधा होती है। पुरानी परम्पराओं की रेखा पर चलते रहने से सुख और सुरक्षा का अहसास बना रहता है। पुराने विचार, जाने–पहचाने रास्ते पर भूलने, भटकने, गिरने पड़ने का कोई खतरा नहीं हैं, भले ही वह रास्ता अब हमें किसी मंजिल पर पहुँचाने लायक नहीं रहा हो, मगर निरापद तो है। परम्परावादी रास्तों पर चलने के हम इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि अब हममें यह सोच विचार की शक्ति नहीं रही कि क्या यह सोच हमें अपनी मंजिल तक पहुँचाने में पगडंडी बनेगी या नहीं?

वास्तव में, हम में नयी मंजिलों पर पहुँचने की इच्छा, आकाँक्षा और महत्वाकाँक्षा जन्म ले रही है, नये विचार, नई परम्पराओं और नये रास्तों का प्रादुर्भाव हो रहा है। परन्तु, अभी तक विकास की मंजिल की ओर जाने वाले रास्तों पर चलने का साहस भी नहीं कर पा रहे हैं। एक ओर ज़माने की परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं और विचारों से परिवर्तन और कुछ नया कर डालने का मन होता है तो दूसरी ओर संस्कारों से रूढ़िवादी होने के कारण ऐसा करने का साहस नहीं कर पाते हैं। इसी द्वन्द्व और विसंगति के कारण हम कुण्ठा, अकर्मण्यता और किंकर्तव्यविमूढ़ता के शिकार हो गये हैं। बदलाव और परिवर्तन जैसा होना चाहिए, वैसा हम नहीं कर पाते हैं। अवांछित, अनुचित प्रवृत्तियाँ, जिन्हें सांस्कृतिक प्रदूषण कहना चाहिए, पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से व्यक्तिगत व्यवहार में आने लगी हैं। हम उसे रोक नहीं पा रहे हैं और न ही अपनी परम्परावादी सभ्यता, मान्यता, मर्यादाओं और मूल्यों की रक्षा कर पा रहे हैं।

अर्थव्यवस्था और व्यापार के कथित उदारीकरण एवं ग्लोबलाईजेशन, साथ ही टी0वी0, सिनेमा, इलेक्ट्रॉनिक दूर संचार साधनों की तेज आँधी से हमारी हालत परम्पराओं की एक कटी पतंग की तरह हो गयी है। अत्यन्त विकासशील, प्रगतिशील, फैशन शो एवं अनेक तरह के आधुनिक उपकरणों से पैदा होने वाली अपसंस्कृति की हवा के थपेड़े परम्पराओं की इस कटी पतंग को कहाँ ले जाकर पटकेंगे, कहा नहीं जा सकता ? हमारा विवेक कुण्ठित होकर समझ नहीं पा रहा– क्या करें और क्या करना चाहिए ?

आधुनिकता की होड़ में हमारा अपना अस्तित्व, खान–पान, रहन–सहन, धर्म, संस्कृति और समाज सभी कुछ इस विकृति से प्रभावित हैं। इतना ही नहीं, बल्कि पूरा देश, समाज, धर्म और पूरा मानवीय जीवन इससे प्रभावित है। आवश्यकता इस विषय पर विचार करने की है कि समाज, नेतागण और विद्वान भी इस विषय पर अपने विचार रखें, साथ ही इस पर लेख, अनुभव आदि पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित करें ताकि समय और आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन लाया जा सके। अतः महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे अन्दर सही–गलत एवं अच्छे–बुरे के भेद करने का विवेक जागृत होना चाहिए, नहीं तो पता नहीं परम्पराओं की कटी पतंग को कहाँ विश्राम मिलेगा ?

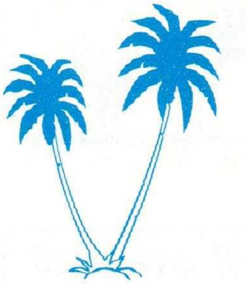

वृक्षों से वार्तालाप

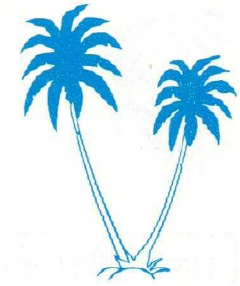

बलबीर सिंह चौहान

भा.व.सं., देहरादून

बात उस समय की है जब मैं हाईस्कूल में पढ़ता था, परीक्षा समाप्त होने के बाद अपने गाँव वापस आया था। घर पर जोरों से काम चल रहा था इसलिए घरवालों ने मुझे गायें चराने के लिए भेजा था। मुझे वह दिन गर्मी का मौसम आते ही बार–बार याद आता है क्योंकि जब मैं गायों को चराने के लिए अपने दोस्तों के साथ गया तो मुझे मालूम भी नहीं था कि गायों को चराने किधर ले जाऊँ? उस दिन मेरे दोस्त गायों को उस तरफ ले गये जहाँ छाया के लिए न तो कोई वृक्ष था और न ही पीने को पानी । पूरे दिन मैं सोचता रहा कि मेरे दोस्त जो रोज इधर आते हैं, वे बिना छाया व पानी के कैसे रोज दिन बिताते हैं, जबकि गर्मी के मौसम में एक घण्टे भी धूप में खड़ा रहना बहुत कठिन काम है। शाम को हम सब अपने–अपने घर को लौटे। मैं रात भर सोचता रहा कि बिना छाया के कैसे रहते हैं ये लोग? अगले दिन मैं फिर गायें चराने अपने दोस्तों के साथ गया। उस दिन हम लोग गायों को दूसरी तरफ ले गये, उस दिन मैं बहुत खुश हुआ क्योंकि वहाँ चारों ओर पेड़ ही पेड़ लगे थे। चारों ओर हरियाली ही हरियाली थी तथा एक जगह ऐसी थी, जिसे देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि दृश्य ही ऐसा था कि दो पेड़ों की गोद से (जड़ों के पास से) पानी निकलते दिख रहा था। तब मेरा ध्यान बार–बार उन पेड़ों पर जाता रहा जिनकी गोदों से पानी निकल रहा था तथा यह सोचता रहा कि जहाँ पेड़–पौधे हैं, वहाँ कितना आनंद आता है ? फिर मैंने पेड़ों से बातें करनी चाही जो निम्नलिखित हैं:–

मैंने पेड़ों से पूछा – आप छायादार क्यों हो?

*पेड़ों ने कहा –*राह चलने वालों को छाया देने के लिए।

मैंने फिर पूछा – आप प्रदूषित हवा क्यों सोखते हो?

पेड़ों ने कहा – जीवधारियों (लोगों) का जीवन बचाने के लिए।

*मैंने पेड़ों से फिर पूछा –*आप फलों का क्या करते हो?

पेड़ों ने कहा – राह चलते सभी लोगों को वितरित करता हूँ।

मैंने आखिरी बार पेड़ों से पूछा – आप अपने तनों का क्या करोगे?

पेड़ों ने कहा – इसे सभी को बाँट देंगे ।

इस प्रकार पेड़ के इन उत्तरों ने मेरे मन को एक नया ज्ञान दिया और भटके हुए मन को जीवन का उद्देश्य बताया।

इस प्रकार, मेरा मानना है कि मानवता के नाते प्रत्येक व्यक्ति को एक–एक वृक्ष अवश्य ही लगाना चाहिए, अगर पेड़ नहीं लगा सकते तो लगे हुए पेड़ों की रक्षा तो अवश्य ही करनी चाहिए। इतना पुण्य तो मानवता के नाते कमाना ही चाहिए ताकि राह पर चलने वालों को छाया, फल आदि मिल सकें।

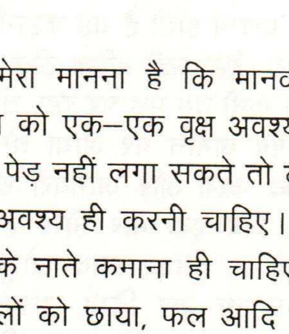

पशु कौन ?

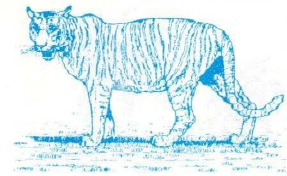

श्रीमति प्रीति श्रीवास्तव

भा.व.सं., देहरादून

> *उसने खेती करना सीखा लेकिन इन्हीं पशुओं पर निर्भर होकर। सवारी करना चाही तो भी सहारा लिया प्रकृति की इसी संतति का। यहाँ तक कि जब उसे मनोरंजन करने की सूझी तो उसके मन में आखेट करने की प्रवृत्ति जागी ।*

ईश्वर की बनाई इस सृष्टि में कई ऐसे अद्‌भुत प्राणी हैं जो अगर न होते तो हमारी कल्पना तक में नहीं आ पाते। हिरनी सी चपलता, मोर सी गर्दन, गज की सी चाल, गाय सा सीधापन, श्वान जैसी वफादारी, सिंह जैसा गुमान, ऐसे अनेकानेक उदाहरण हम इन्हीं प्राणियों से ही तो लेते हैं। सोचिये जरा कि अगर ये न होते तो कैसा होता हमारा संसार?

आज हम इन बेजुबानों की आवाज को कितना समझ रहे हैं ? जबकि इनका योगदान हमारे लिये कितना है, क्या कभी सोचा है हमने? इंसान तो अपनी हरेक जरूरतों के लिये सदा से ही इन प्राणियों पर निर्भर रहा है।

आदिकाल से प्रारम्भ होती है यह कहानी, जब मनुष्य, आज के मनुष्य जैसा नहीं बल्कि ठीक इन्हीं प्राणियों की तरह था। कभी वह पेड़ पर रहा, तो कभी जमीन पर आया। जब जमीन पर आया तो सबसे पहले उसने उपलब्ध फलों और जानवरों से अपनी भूख को मिटाया। जब एक बार माँस का स्वाद चख लिया, फिर तो वह इसका स्वाद–लोलुप ही हो गया और उसने प्रारम्भ कर दिया, इनके विनाश का सिलसिला। जब कुछ और समय बीता तो उसने खेती करना सीखा लेकिन इन्हीं पशुओं पर निर्भर होकर। सवारी करना चाही तो भी सहारा लिया प्रकृति की इसी संतति का। यहाँ तक कि जब उसे मनोरंजन करने की सूझी तो उसके मन में आखेट करने की प्रवृत्ति जागी । कहने का तात्पर्य यह है कि आज प्रकृति में विद्यमान ऐसा कौन सा प्राणी है, जिस पर आदमकद पशु का कहर न बरपा हो। इंसान पशुओं के मुकाबले सभ्य होने का दावा तो करता है, लेकिन उसके कई काम ऐसे हैं जो उसे पशुत्व से भी नीचे ले जाते हैं। अगर हममें जरा भी संवेदना या मानवीयता शेष है, तो हमें अविलम्ब पशुओं पर, प्राणियों पर होने वाला अत्याचार बंद कर देना चाहिये और इनके कल्याण के बारे में सोचना आरम्भ कर देना चाहिये। आखिर प्यार के भूखे तो ये भी होते हैं और प्यार का प्रत्युत्तर भी प्यार से देते हैं। इन प्राणियों ने मानव को अपना सर्वस्व दे डाला किन्तु मानव ने इन्हें क्या दिया? ये निरीह प्राणी मनुष्य की लगातार अपेक्षा के शिकार हैं। मानव ने इनके अंग–प्रत्यंग से लेकर मृतक शरीर तक का उपयोग करना सीख लिया है। यदि हम पर्यावरण और वनों से सम्बन्धित लेखों और रिपोर्टों का अवलोकन करें तो भविष्य का भयावह चित्र आँखों के सामने तैरने लगता है। यदि मनुष्य अपनी आगामी पीढ़ियों को एक जीने लायक दुनिया देना चाहता है, तो बिना समय गँवाये उसे जीव और वनस्पति के संरक्षण पर विशेष प्रयास करना ही होगा।

विश्व पशु कल्याण दिवस और वन्यजीव सप्ताह इत्यादि मनाने की आवश्यकता भी इसलिये पड़ी कि हम इन प्राणियों के प्रति एकदम उदासीन हो चुके थे। जरा अपने दिल पर हाथ रखें और सोचें कि क्या हम इनके प्रति पूरी तरह जागरूक और संवेदनशील हैं ?

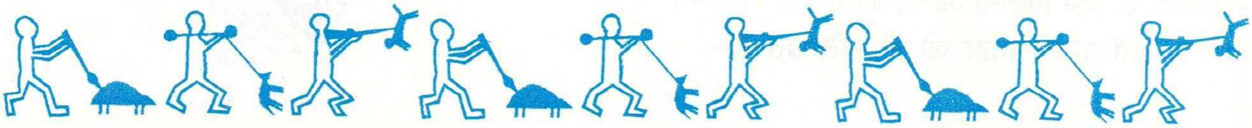

वाणी का चमत्कार

सूरत सिंह लाम्बा
भा.व.सं., देहरादून

क्रोध या ईर्ष्या वश यदि कोई बुरा बोल भी दे तो उसे मुस्करा कर टाल दें और मधुर वाणी में ही जबाब दें तो सामने वाला शर्म से पानी पानी हो जायेगा। ज़रा सोचिए, कोई व्यक्ति कड़वी बात कह कर, हम को उत्तेजित करना या मिटाना य अपमानित करना चाहता है और हम उत्तेजित हो जाते हैं। चिड़ जाते हैं तो वह अपने उद्देश्य में सफल हो गया अर्थात् वह जीत गया और हम हार गये।

वाणी यानी बोलना हमारे विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम तो है ही साथ ही हमारे व्यक्तित्व का निमार्ण करने और इसे प्रभावशाली बनाने में भी इसका भारी हाथ होता है। वाणी हमारे व्यक्तित्व का दर्पण है। बोलना एवं बातचीत करना आचार संहिता का महत्वपूर्ण अंग है।

वाणी मानवता के लिए ईश्वर का वरदान है। सफलता और असफलता वाणी की देन है। सुख–दुःख वाणी का ही परिणाम है । वाणी मनुष्य के स्वभाव का परिचय देती है। एक वृक्ष की डाल पर यदि कौआ और कोयल एक साथ बैठे हो तो उनके रूप–रंग में ज्यादा फर्क नहीं दिखाई देता लेकिन बोलते ही यह फर्क साफ दिखाई दे जाता है कि कौन कोयल है और कौन कौआ। इसी प्रकार मनुष्य की योग्यता, विद्वता और शिष्टता या इसके विपरीत अयोग्यता, अज्ञानता और अशिष्टता का पता उसकी वाणी से ही चलता है। इसलिए साक्षात्कार में लगभग एक जैसी योग्यता होने पर भी प्रभावशाली सम्मोहक एवं कलात्मक वाणी के धनी उम्मीदवार अपने प्रतिद्वंदियों की अपेक्षा सफलता हासिल कर लेते हैं।

संसार में न तो कोई किसी का शत्रु है न ही मित्र। वाणी ही मित्र एवं शत्रु का निर्माण करती है जो कटु वाणी बोलता है, जिसकी वाणी रूखी है वह अपने वाग्वाणों से दूसरों को पीड़ा पहुँचाता है, दूसरों को अपमानित करने की कोशिश करता है, तिल का ताड़ बना देता है, छोटी–छोटी बातों पर तूफान खड़ा कर देता है,जिद ज्वाला बन जाती है, बात–बात में गाली का प्रयोग करता है वह अपने मित्र कम, शत्रु ज्यादा पैदा करता है। कबीर ने कहा –

मधुर वचन हैं औषधी, कटुक बचन हैं तीर
श्रवण द्वारा ते संचरै सालै सफल शरीर

अर्थात् मधुर वाणी एक दवा के समान है जो रोगों को हरती है, दीनता मिटाती है, दुःख दर्द दूर करती है और मरते हुए प्राणी में भी जीवनशक्ति का संचार कर देती है वहीं कटु वाणी तीर के समान है जो कानों के माध्यम से सारे शरीर को घाव पहुँचाती है। इसीलिए कहते हैं कि तलवार के घाव भर जाते हैं लेकिन वाणी के नहीं।

वाणी ने इस संसार में बड़े–बड़े करिश्मे किये हैं वहीं वाणी से बड़ी–बड़ी घटनाऐं भी हुई हैं। कहते हैं कैकेयी राम को भरत की अपेक्षा अधिक प्यार करती थी, लेकिन मन्थरा की वाणी ने "कोउ नृप होउ हमहि का हानी" कहकर कैकेयी को उकसाया और राम को वनवास जाना पड़ा । इसी प्रकार द्रौपदी की एक वाणी ने कि "अन्धों के अन्धे ही पैदा होते है" महाभारत का युद्ध करवा दिया। अर्जुन जब युद्ध

भूमि में अपने निकट सम्बन्धियों, दोस्तों को देखकर युद्ध करने से विमुख हो गया तो भगवान कृष्ण की गीता–वाणी का चमत्कार था कि अर्जुन युद्ध के लिये आतुर हो गया।

वाणी में आश्चर्यजनक शक्ति होती है। यह उठने की प्रेरणा देती है। लक्ष्य तक पहुँचाती है। लोकमान्य तिलक के यह कहने पर कि "स्वाधीनता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" देश में क्रान्ति की लहर दौड गयी। सुभाष चन्द्र बोस का यह कहना भर था कि "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा" आजाद हिन्द फौज तैयार हो गयी स्वामी विवेकानन्द के दो शब्दों – ब्रदर्स एवं सिस्टर्स ने अमेरिका में तहलका मचा दिया। वाणी ने न जाने और भी कितने चमत्कार किये हैं।

यूँ तो बोलने का ढंग कई प्रकार का होता है लेकिन मुख्य रूप से इसे दो वर्गों में विभक्त करते हैं। पहला वर्ग है – मधुरता और विनम्रता के साथ बोलना एवं दूसरा वर्ग है कटुता एवं अकड़ के साथ बोलना । मधुर एवं विनम्र वाणी का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। सुनने वाले प्रसन्न, सन्तुष्ट और प्रभावित होते हैं इसलिए वे सहयोगी अनुकूल एवं मित्र हो जाते हैं। आप से मिलकर बहुत खुशी हुई, आप आये बहार आ गई, आपके आने से हम धन्य हो गये, आप से मिलकर तबियत खुश हो गई यह सब वाणी का चमत्कार है जो सुनने वालों को आहलादित कर देती है। जहाँ एक पैसे की आशा न हो वहाँ लाखों रूपये का फायदा हो जाता है। आवश्यकता है मीठी वाणी की । अतः मधुर वाणी कामधेनु है, कामनाओं को पूर्ण करती है । इसलिए कहावत है कि 'गुड़ न दे सके तो गुड़ जैसी बात कर दे। मधुर वाणी के बारे में चाणक्य नीति में लिखा है–

'प्रिय वाक्य प्रदोजन सर्वे तुष्यन्ति जन्नवः, तस्मात देव वाक्तव्य वचने का दरिद्रता।"

अर्थात् मधुर वाणी और प्रिय भाषा बोलने से सभी प्राणी प्रसन्न और सन्तुष्ट होते हैं। अतः प्रिय वचन बोलने चाहिए । मधुर भाषण में सम्मोहक शक्ति होती है अतः बोलने में दरिद्रता नहीं रखनी चाहिए।

आगे कहा है

'संसारकटु वृक्षस्य द्वे फले अमृतोपमें
सुभाषित च सुरुवादु संगतिः सुजने जने।

अर्थात् इस संसार रूपी कड़वे वृक्ष में अमृत के समान मधुर दो ही फल हैं – मधुर वचन और सज्जनों की संगति । मनुष्य को चाहिए की वह इन दो फलों का सेवन अवश्य करे।

वाणी का दूसरा वर्ग है कठोर, कटु एवं अप्रिय वाणी। इस से विरोध, कटुता और कलह पैदा होती है क्योंकि वाणी का सम्बन्ध हृदय से होता है, मन से होता हैं अतः जब मन मे क्रोध, ईर्ष्या, अभिमान और बैर की भावना होती है तभी कटु वचन बोले जाते हैं। इस प्रकार की भावना रखने वाला व्यक्ति मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ रह ही नहीं सकता। चरक संहिता सूत्र में इस सम्बन्ध में कहा गया है–

परुषस्थाति मात्रस्य सूचक स्यानुतस्य च।
वक्यस्या कालयुक्तस्य धारयेद् वेग मुध्यितम।

अर्थात् अत्यन्त कठोर वचन, चुगल खोरी, झूठ बोलना और बेवक्त बोलना– ये बुरे एवं रोकने योग्य वाचिक वेग है अतः इन्हे रोकना चाहिए यानी ग्रहण नहीं करना चाहिए। चाणक्य नीति में लिखा है–

परस्परस्य मर्माणि ये भाषान्ते नराधमाः,
त एव विलयं यान्ति बल्मीकोदर सर्पवत्

अर्थात् जो नीच पुरूष एक दूसरे के प्रति अन्तरात्मा को दुःख देने वाले, मर्मों को आहत करने वाले वचन बोलते हैं, वे ऐसे ही नष्ट हो जाते हैं जैसे बांबी में फंस कर सांप मारा जाता है।

कटु और कठोर शब्द बोलना, कटुभाषी व्यक्ति को फिलहाल भले ही सन्तोष देता हो कि खरी–खोटी

सुना दी बच्चू को पर ऐसा सन्तोष झूठा है। क्रोध या ईर्ष्या वश यदि कोई बुरा बोल भी दे तो उसे मुस्करा कर टाल दें और मधुर वाणी में ही जबाब दें तो सामने वाला शर्म से पानी पानी हो जायेगा। ज़रा सोचिए, कोई व्यक्ति कड़वी बात कह कर, हम को उत्तेजित करना या मिटाना या अपमानित करना चाहता है और हम उत्तेजित हो जाते हैं। चिड़ जाते हैं तो वह अपने उद्देश्य में सफल हो गया अर्थात् वह जीत गया और हम हार गये।

प्रकृति का भी यह नियम है कि वह खाता बराबर जरूर करती है । यह जगत, यह दुनिया और इसकी दुनियादारी सब एक चक्र मे घूम रहा है इसीलिए संसार को एक चक्र कहा गया है और चक्र में घूमती हुई चीज जहाँ से शुरू होती है वही पहुँच जाती है।

आमतौर पर सामान्य व्यक्ति इस दार्शनिक रहस्य को जानता है, समझता है । लेकिन ध्यान से पालन नहीं करता है। आज हम अगर दुःखी हैं तो इसलिए क्योंकि हमने औरों को दुःख ही ज्यादा दिये हैं। अपने सुख को ही सुख समझ कर, अपने सुख के लिए, दूसरों को दुःखी करते रहे और इस का सबसे बड़ा और प्रमुख माध्यम वाणी ही है। हमने कटु वचन बोल कर आज जो कड़वा बीज सामने वाले के दिल में बो दिया है वह कल झाड़ बन कर उभरेगा और उसके कड़वे फल हमें ही खाने होगें हम जो दूसरो के लिए करते हैं, दूसरों को जो कुछ देते हैं, कल को लौट कर वही हमें मिलने वाला है। इसमें देर हो सकती है अन्धेर नहीं। यह हो सकता है कि हमारा दिया हुआ उसी व्यक्ति से वापस न मिले, किसी अन्य माध्यम से मिले, पर मिलता जरूर है ।

अतः हम जो कुछ बोले वह मधुर एवं विनम्र होना चाहिए, हमारी बात संक्षिप्त और सारगार्भित होनी चाहिए। अपनी बात नपे तुले और शिष्ट शब्दों में कहनी चाहिए। कम बोलने का अपना एक अलग ही प्रभाव होता है, एक गरिमा होती है और सुनने वालों में उत्सुकता बनी रहती है। हमारी विनम्रता एवं मधुरता दिल से होनी चाहिए, नकली एवं बनावटी नहीं तभी सुनने वाले पर वांछित असर होता है । हमें बड़बोला और बकवादी कदापि नहीं होना चाहिए ऐसा बोलें कि आप के पीछे से लोग आप की अनावश्यक निंदा न करे। किसी शायर ने क्या खूब कहा है–

यू तो मुंह देखे की बात करते है जहाँ में सभी कोई,
बात तो तब है, जब मेरे बाद भी, मेरी बात रहे।

साथ ही हम अपने विचारों को सही एवं स्पष्ट ढंग से केवल अपनी मातृभाषा में ही प्रस्तुत कर सकते हैं। अतः बातचीत का माध्यम अपनी मातृभाषा को ही बनाना चाहिए । इससे हम अपने विचार तो स्पष्ट रूप से प्रकट कर ही सकेगें, हमारी मातृभाषा को सम्मान भी मिलेगा और इनका प्रचार–प्रसार भी होगा।

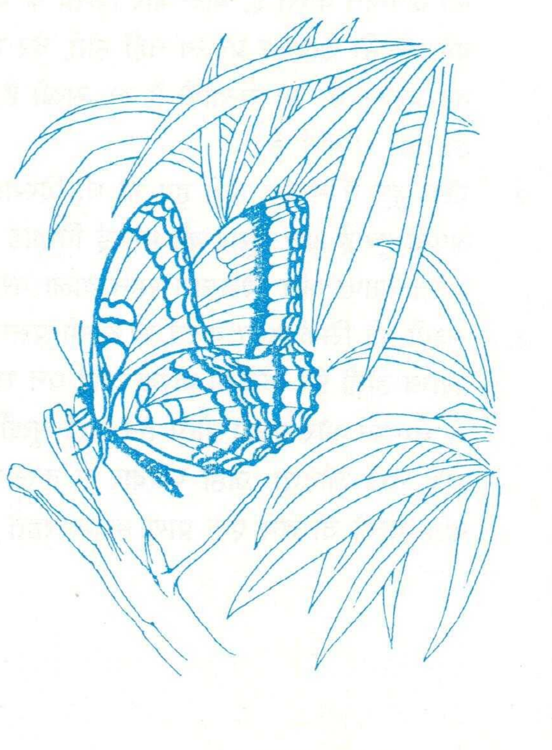

सत्य का फल

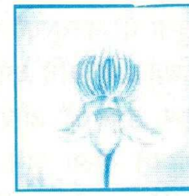

बलबीर सिंह चौहान

भा.व.सं., देहरादून

बात उस समय की है जब मैं प्राइमरी स्कूल में कक्षा पाँचवीं में पढ़ता था। एक दिन गुरूजी ने घर से गणित के दस प्रश्नों को हल करके लाने को कहा। अगले दिन सभी छात्रों में से कुछ पाँच प्रश्न हल करके लाये, कुछ 6 प्रश्न और कुछ सात प्रश्न। हमारी कक्षा में दो छात्राएँ भी थीं, उनमें से एक छात्रा सभी प्रश्नों को हल करके लायी थी। जब हम स्कूल पहुँचे तो गुरूजी ने कहा– सभी छात्र–छात्रायें अपनी अपनी कापी चैक करायें। गुरूजी उस छात्रा के सभी प्रश्नों का सही उत्तर देखकर बहुत ही प्रसन्न हुए और उस छात्रा को इनाम देने को कहा। यह सुनकर वह छात्रा रोने लगी। गुरूजी को छात्रा को देखकर आश्चर्य हुआ और उन्होंने उससे रोने का कारण पूछा, तो छात्रा ने हाथ जोड़कर कहा– आपने समझा होगा कि इन सभी प्रश्नों के उत्तर मैंने अपनी बुद्धि से हल किये, परन्तु यह सच नहीं है, इसमें मैंने अपने मित्रों की सहायता ली है। अब आप ही बताइए कि मैं इनाम पाने की हकदार हूँ या सजा पाने की। यह सुनकर गुरूजी और भी खुश हुए तथा उस छात्रा के हाथ में इनाम देते हुए कहा– अब मैं तुमको यह इनाम तुम्हारी सच्चाई के लिए देता हूँ। इस प्रकार सत्य का कितना महत्व है, मुझे उस दिन पता चला ।

शिक्षाप्रद नीति वचन

1. दान देकर जो इसका डंका पीटते हैं परोपकार का बदला चाहते हैं, पीठ पीछे निंदा करते हैं, घर आये का अपमान करते हैं, बार–बार किसी के यहाँ जाते रहते हैं, बिना पूछे अपनी राय दिया करते हैं, दूसरों की उन्नति देखकर प्रसन्न नहीं होते, देर सबेर ऐसे लोग अपनी प्रतिष्ठा खो देते हैं। जो ऋणग्रस्त नहीं वह प्रसन्न है, जो सन्तोषी है वह सुखी है, शोक का कारण मोह है और जिस मार्ग पर महापुरूष चले हों वही सन्मार्ग है।
2. जैसे दूध में मौजूद होते हुए भी घी दिखाई नहीं देता, फूल में गन्ध होती है पर दिखाई नहीं देती, हमें अपनी बुराई और दूसरे की भलाई दिखाई नहीं देती, बीज में छिपा वृक्ष दिखाई नहीं देता, शरीर में और सर्वत्र व्याप्त और विद्यमान रहने वाला परमात्मा भी दिखाई नहीं देता।
3. लक्ष्मी की सिर्फ पूजा करने से लक्ष्मी प्रसन्न नहीं होती बल्कि सिंह के समान उद्योग करने से ही लक्ष्मी प्रसन्न होती है। कंजूसी करके कोई धन सम्पन्न और सुखी नहीं हो सकता बल्कि धन का उपयोग करने से सम्पन्न और सुखी होता है। जहाँ मूर्खों का आदर नहीं होता, जहाँ से याचक कुछ पाये बिना खाली हाथ नहीं लौटता, जहाँ परिवार में कलह नहीं होती और सब परस्पर प्रीतिपूर्वक रहते हैं और जहाँ पति–पत्नी दो तन एक प्राण होकर रहते हैं वहाँ लक्ष्मी (श्री सम्पन्नता) का वास रहता है।

संकलनकर्त्ता

विभोर तोमर

360, सुभाष नगर, देहरादून

मेरा तो राग अधूरा है

मेरा तो राग अधूरा है,
हो सकता कभी ना पूरा है
मैं तो उस पथ का हूँ राही,
जिसमें अंधियारा और स्याही
सुलाए हैं बरबस अरमान,उन्हें फिर आप जगाऊँ क्या
जो बुझे हुए हैं स्नेह हीन, फिर वे दीप जलाऊँ क्या
अँग्रेजी के पोषक जिन्होंने, मेरे पथ पर काँटे बोये
कोई पूछे उनसे क्या? जन्म समय अँग्रेजी में रोये
(पी.यू.टी.) पुट पढ़ते पर (बी.यू.टी.) बट हो जाता
अपनी भाषा छोड़ के व्यक्ति अंग्रेजी को जाता
हिन्दी की जड़ काटता, अँग्रेजी को सम्मान देता है
जाने अनजाने में इन्सान अपनी बात बना देता है,
मेरा तो राग अधूरा है, हो सकता कभी ना पूरा है।

नवीन चन्द्र काण्डपाल
भा.व.सं., देहरादून

परम्परा

"मै भारती, करूँ आरती
हर युग में चाहूँ, जन्म लूँ इसी धरती"

यहाँ संगम गगन, पवन, हरियाली का
क्या मन मोहक, दृश्य नजारा है
हर कदम–कदम और कण–कण में
देव भूमि का ही किनारा है।

ऋषि मुनि ज्ञानी तपस्वियों का
सदियों से रहा बसेरा है।
बद्री,केदार,गंगोत्री, जमनोत्री
चारों धामों की ये इक धरा है।

गंगा का निर्मल जल स्त्रोत यहाँ
ऊँचे शिखरों से बहती धारा है
इस पर्यावरण में हर प्राणी
लगता सबको प्यारा है।

हर सन्त पुरूष के चरण पड़े
गंगा ने दिखाई ममता है
यहाँ कदम–कदम पर तीर्थ मिलें
लोगों में यहाँ पर समता है।

सत्य अहिंसा हर दिल में बसें
हम सब की ये अभिलाषा है
नये युग की ज्योति बनें सभी
हम सब की ऐसी आशा है।

दया प्रेम है जीवों पर
हर मन में स्नेह भरा है
मिल जुलकर हम सब रहते हैं
ये इस धरा की परम्परा है।

संजय भारती
भा.व.सं., देहरादून

मंजिल

"मंजिल है अगर पानी
तो अपने समय को व्यर्थ न गंवाइये
अगर किसी से प्यार भी करना है,
तो उसे मुकाम तक ले जाइये
समय का चक्र चल रहा है,
पर आप मत घबराईये
जो भी आपकी मंजिल हो,
उस मंजिल तक तो जाइये
अपनी मंजिल पर पहुँचने से पहले
बस एक कसम खाइये
मंजिल कदमों में होगी,
मगर अपनी कोई मंजिल तो बनाइये
राह में चलते हुए भी,
बस आप अपनी मंजिल मत भूल जाइये
अगर जिन्दगी खुशगवार बनानी है,
तो ऐसा कुछ कीजिये
जो औरों से हटकर हो,
फिर मंजिल की एक पहचान बनाइये
मंजिल पर पहुँचकर
मंजिल की राह दूसरों को बताइये

बबीता
EWS, इंदिरा पुरम,
एम.डी.डी.ए. कालोनी,
सब्ज़ी मंडी, देहरादून

प्रशिक्षण

वन्यजीव संस्थान में, मिला न जंगली एक,
कामकाजी पाये यहाँ, चुस्त मंगली अनेक,
चुस्त मंगली अनेक सीख लें इनसे ऐसी,
तुरन्त उत्तर देती, आइसिस विनसिस जैसी,
जितने भी यहाँ लोग मिले, सहयोगी श्रमी काम में,
साथी भी सुधिजन दिखे, वन्यजीव संस्थान में।

फाईल डाटा एण्ट्री, डिस्प्ले मीनू सर्च,
एफ0डी0टी0 एफस्टी सीखें, सब सरकारी खर्च,
सब सरकारी खर्च, सीडिएस आइसिस के लिये,
पठाये गये हम यहां, भावसं बुलवाय लिये,
वन्यजीव संस्थान की तब खरी हो यह इनवेन्ट्री
काम पे जाकर जब करें, हम फाईल डाटा एण्ट्री।

प्रतिभागी के तौर पर कुछ कहने का निर्देश मिला
छात्र सभी खुश दिखते, चालू रहे यह सिलसिला
चालू रहे यह सिलसिला, निस्सात बनी रहे धन्य,
कम्प्यूटर उपयोग में, हों शिक्षित सब जन्य,
साधन सुविधा खूब रही, हम सबकी मनमाँगी,
धन्यवाद, आभार प्रदर्शित, कहें सभी प्रतिभागी।

शाम गणपति ढमढेरे
राष्ट्रीय कृषि वानिकी अनुसंधान केन्द्र,
झांसी (उ. प्र.)

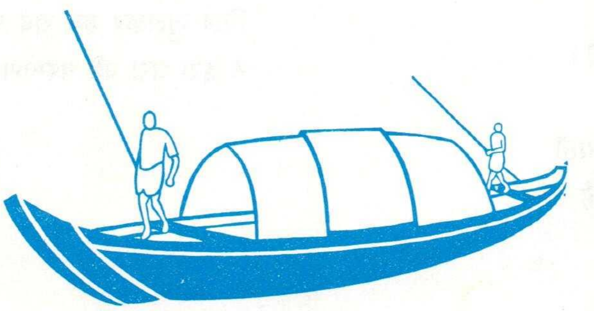

भ्रष्टाचार

"खूब करो धांधली, कमीशन घोटालों की,
डरो नहीं किसी से भैया,
मैं यहाँ मन्दिर में बैठा हूँ
परन्तु रहे याद, मेरा हिस्सा चढ़ाओ यहाँ पर,
बाकी तुम सब मिल बाँटकर, मौज कर खाओ
कोई बोलता है तो बोलने दो,
लिखता है तो लिखने दो,
हम तुम एक हैं तो,
क्या कोई कुछ कर पायेगा
अरे, ऊपर वाले भी तो हड़प रहे हैं,
हमने हड़प लिया तो क्या बुरा किया
आखिर मुफ्त की कमाई तो सबको चाहिए,
क्या हमने ही ईमानदारी का ठेका लिया है
तू क्यों ईमानदारी के पीछे पड़ा है,
मरेगा भूखा, न देगा कोई टुकड़ा
क्योंकि सभी काम चोर हैं यहाँ,
नं0 2 के पीछे पड़े हैं सभी यहाँ ।

सुधा जैन
तिलक रोड, देहरादून

अर्थहीनता

इतना गुज़ार दिया जीवन
क्या हासिल किया
दो रोटी, एक छत और चंद कपड़े
इसके लिये इतने लफड़े
ये पा भी लिया तो
कौन सा तीर मार लिया
कमोबेश सभी को मिलते हैं
यहाँ पीने को पानी
बोलने को बानी
और जीने को जिंदगानी
बस इसी में खुश हो लिये
दिन भर जागे, भागे
रात हुई, सो लिये
फिर सुबह, दोपहर,
शाम और रात का अंतहीन सिलसिला
क्या मिला?
न प्यार, न पैसा, न इज्जत, न शोहरत
जो मिला क्या उसे पल–पल खो नहीं रहे हो
व्यर्थ ही अर्थहीन दुनिया में क्या ढूँढ़ते रहे ?
यहाँ बदल गये हैं अब शब्दों के अर्थ ही ।

कृष्ण कुमार श्रीवास्तव 'मध्यम'
भा.व.सं., देहरादून

जीवन

एक जंगल एक गाँव
कहीं धूप कहीं छाँव
कुछ कहना भी, चुप रहना भी
इस शाम में एक उदासी भी है
और होठों पर एक हँसी भी
यह कहती है–
यही जिन्दगी है, जिये जाओ
एक नन्हीं सी है पगडंडी
जगह–जगह गड़ी है देवता की झण्डी
राहों में कुछ निशान हैं बाकी
निशानों में कुछ यादें है,
इन यादों को छू भी लो
इन यादों को भुला भी दो
यह जीवन है, जिये जाओ
जलधारे की मीठी आवाज
बज रहे हैं सात सुरों के साज
इन धुनों में, कुछ ठहाके भी, कुछ आँसू भी,
यह जीवन है, जिये जाओ
एक पक्षी बोला
सुबह ने दरवाजा खोला
एक धुंध हटी, एक पलक खुली
इस खामोशी में –
एक निर्भयता भी, एक भय–सा भी
यह प्रकृति का सुधारस है
इसे यूँ ही तुम पिये जाओ
यह जीवन है, जिये जाओ ।

अंजली अवस्थी
भा.व.सं., देहरादून

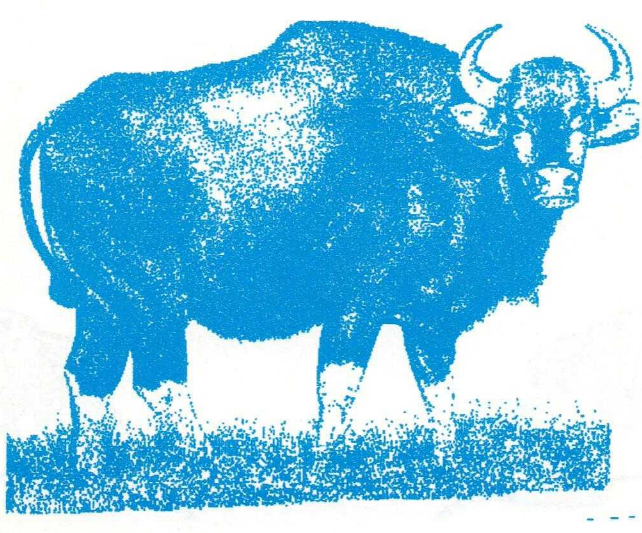

अखण्ड भारत आजाद भारत – अहिंसा

यही टंगी तस्वीर कुछ कहना चाहती है
कहो तो पूछ लें इससे कि ये क्या चाहती है
यह मेरा भारत देश अखण्ड है
इसे अखण्ड "भारत" ही रहने दो

इसे भा–र–त में खण्डित मत करो
मेरे शस्त्र थे धोती, कुरता और अहिंसा
लेकिन आज बन गये है, बन्दूक, तलवार और हिंसा
मेरा संघर्ष था आजाद व उन्नत भारत
न कभी था हिन्दु–मुस्लिम का भारत
मेरा सपना था शांत व समृद्ध भारत
न कभी था दंगों व भ्रष्टाचार का भारत

गुजरात जो तुम्हारे बापू की जननी है
भारत की स्वतंत्रता के सफर की सजनी है
इसे और कलंकित मत करो तलवार से।
ह्रदय मेरा एक, छलनी न करो तुम वार से

मुझे मालूम है आजादी के मधुर आगमन का
क्या तुम्हें पता है, वीरों के संघर्ष और बलिदान का
क्यों तुम फिर पराधीन हो रहे हो, स्वार्थ अमानवीयता के हाथों में
क्यों तुम भ्रमित हो रहे हो, साम्प्रदायिकता की बातों में
यह टंगी तस्वीर कहना चाहती है
देशवासी एक हों, यह चाहती है

मदन सिंह राणा
भा.व.सं., देहरादून

मँहगी पढ़ाई

लड़ना है मँहगाई से
मँहगी हुई पढ़ाई से
मँहगी कापी–कलम–किताब
कैसे हल हम करें हिसाब
कीमत आसमान यूँ छूती
हो जाता है मूड खराब
टीचर सदा कड़ाई से
माँगे फीस रूखाई से
माँ–बाप कितने खटते हैं?
रूपये फिर भी न जुटते हैं

बढ़ती फरमाइशें हमारी
थकते नहीं, माँग रटते हैं
बढ़ती बड़ी ढिठाई से
यदि जरूरतें हम कम कर दें
घरवालों में हिम्मत भर दें
क्या खरीदना बहुत जरूरी
खुद सवाल कर खुद उत्तर दें
जुड़–जुड़ पाई–पाई से
बनते पर्वत राई से

चक्षु तोमर
360, सुभाष नगर, देहरादून

रामराज

देश वही है, भेष वही है
फिर भी द्वेष की ज्वाला
जिस्म वही है खून वही है
फिर क्यों नफरत की ज्वाला

राम,रहीम के नाम पर लड़ते
खून बहाते अपनों का
ध्यान नही है किसी को कुछ भी
किसी शहीद के सपनों का

याद शहीदों को करके ये,
नारे खूब लगाते हैं
पर क्या उनके खून का सच्चा
मोल कभी ये चुकाते हैं ?

हिंसा, द्वेष का राज यहाँ पर
नहीं सुरक्षित कोई जन,
भ्रष्टाचार दिनोंदिन बढ़ता,
शान्त नहीं है कोई मन,

इतने पर भी कुछ लोगों का
वादा और दावा है आज
बस देखें और देखते रहिये,
आ ही रहा है रामराज

पदमा रानी
भा.व.सं., देहरादून

मीठे वचन बोल

हरा भरा जब रहेगा वन,
सुख शांतिमय होगा जीवन
यदि आप नष्ट करेंगे वन,
रूठ जायेगे वर्षा और पवन
वन में वन्यजीव करें स्वच्छन्द विचरण
नहीं कोई बाधा, उनका हो संरक्षण

चली यहाँ है स्वार्थ की आँधी,
कहाँ से आयेंगे अब गाँधी?
कुछ भी अब न शुद्ध मिलेगा,
अब तो धरा पर केवल युद्ध ही होगा
अब शांति की कहाँ बात होगी,
बुद्ध से कहाँ मुलाकात होगी ?

प्यारे मीठे वचन बोल,
मत मिठास में जहर घोल
बातों को तौलकर ही बोल,
हर बात का है अपना ही मोल
मीठी बातों पर मन जाता डोल,
शान्ति जीवन में है कितनी अनमोल ?

प्रद्युम्न प्रसाद सिंह
118, लौहांचल, सेक्टर – 12,
बोकारो स्टील सिटी
बोकारो

दफ्तरी व्यंग्य

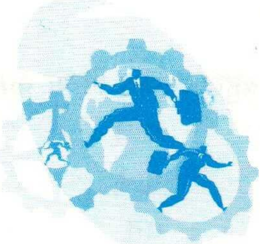

क्यों करती है तैयारी जल्दी,
दफ्तर है सरकारी,
काम करो या मारो फर्लो,
तनख्वाह है हमारी

बेशक जाते समय तो,
रोज लेट हो जाओ,
परन्तु छुट्टी पर समय से,
पहले घर आ जाओ

नौ बजे का समय है
वैसे तो दफ्तर आने का
आधे घण्टे के बाद आ रहा
अधिकारी दफ्तर का,

दफ्तर के बाहर लगी है
लम्बी कतार पब्लिक की
लेटलतीफी से हो जाती
हालत पतली सबकी

इसलिए तो काम भी शायद
बनता नहीं किसी का,
घूसखोरी और कामचोरी से
भला न होय किसी का।

अधिकारी गर देर से आये
तो बाबू भी बैठा रहता
जनता है सीधी सादी
कोई कुछ न कहता,

क्यों करती है तैयारी जल्दी
दफ्तर है सरकारी
काम करो या मारो फर्लो
तनख्वाह है हमारी ।

सुधा जैन
तिलक रोड, देहरादून

टाइम पास

बहुत अर्जित किया कहने को
ज्ञान,
मान,
धन,
जन,
परिजन
इस अर्जन में
खोया भी बहुत कुछ,
अपनी प्रतिबद्धता,
अपनी पसंद
बस वक्त और किस्मत के हाथों में बंद
अपनी नाव को हवा के
थपेड़ों से बहने दिया
एक अथाह, असीम सागर में,
अपनी सोच को मिला दिया
दूसरों की सोच में
और जी लिया
एक अर्थहीन जीवन
पत्नी, बच्चों
और मित्रों के साथ,
बस टाइम पास कर लिया।
कहने को बहुत कुछ
अर्जित कर लिया

कृष्ण कुमार श्रीवास्तव 'मध्यम'
भा.व.सं., देहरादून

नारी

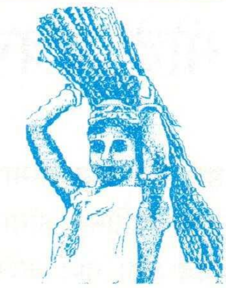

बदल रहा है रूप तुम्हारा
बदल रही पहचान तुम्हारी
पहले जो घर की थी रानी
अब उसकी है जग ने मानी

कर्म से इसने मुख ना मोड़ा
बिखरे घर को इसने जोड़ा
घर में ममतामयी माँ बनकर
बाहर का कोई काम न छोड़ा

प्राचीन मूल्यों को संग लेकर
नवीनता से खूब संवारा
कोई क्षेत्र न ऐसा छोड़ा
जहाँ न इसने परचम गाड़ा

छुईमुई की छवि तोड़कर
साहस इसने खूब दिखाया
भारत की नारी ने अपनी
संस्कृति को भी खूब सजाया

कहा सभी ने एक ही स्वर में
भारत की नारी है महान
अपने आदर्शों पर चलकर
जीत लेती ये हर मैदान

पदमा रानी
भा.व.सं., देहरादून

संस्थान में आयोजित हिन्दी गतिविधियां

श्रीमती बलजीत कौर

भारतीय वन्यजीव संस्थान में हिन्दी के प्रयोग में प्रगति लाने के उद्देश्य से समय–समय पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये जाते रहे हैं । उनमें से कुछ इस प्रकार हैः–

- पिछले वर्ष 2001 में इस संस्थान द्वारा निम्नलिखित कर्मचारियों को हिन्दी आशुलिपि एवं हिन्दी टंकण के प्रशिक्षण के लिये भेजा गया।

    1. श्री आर. के. सागर, हिन्दी आशुलिपि
    2. श्री ए.एस. रावत, हिन्दी टंकण
    3. श्री राम कुमार, हिन्दी टंकण
    4. श्रीमती साधना वर्मा, हिन्दी टंकण

- दिनाँक 3 अक्टूबर 2001 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित एक समारोह में माननीय उपराष्ट्रपति श्री कृष्णकान्त द्वारा भारतीय वन्यजीव संस्थान को वर्ष 1999 के लिए सांस्थानिक श्रेणी का राजीव गाँधी वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार प्रदान किया गया। इसी अवसर पर संस्थान में संकाय सदस्यों द्वारा लिखित दो पुस्तकों का विमोचन किया गया। जिनमें से एक "प्रशिक्षकों के लिए मैन्युअल" हिन्दी में लिखी गई थी । श्री ए.के. भारद्वाज, श्री बी.एम.एस. राठौर व डा. रुचि बडोला इसके लेखक एवं श्री के.के. श्रीवास्तव सम्पादक थे।

- दिनाँक 12 अक्टूबर, 2001 को "सरकारी कामकाज में हिन्दी के उपयोग की गति धीमी क्यों? इसे गतिमान करने के उपाय" नामक शीर्षक से संस्थान के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें श्री के.के. श्रीवास्तव, श्री एम.डी. गुप्ता एवं कुमारी पद्मा रानी क्रमशः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर रहे। प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों को दिनाँक 27 मार्च, 2002 को एक विशेष समारोह में माननीय वन, वन्यजीव, पर्यावरण एवं शहरी विकास मंत्री उत्तरांचल, श्री नव प्रभात द्वारा पुरस्कृत

किया गया। **इस अवसर पर सम्माननीय केन्द्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्री श्री टी0आर0 बालू भी उपस्थित थे।**

- संस्थान में 22 मई 2002 को अन्तर्राष्ट्रीय जैव–विविधता दिवस मनाया गया। जिसका आयोजन हिन्दी में किया गया। इसके अन्तर्गत् **जैव–विविधता संरक्षण** नामक शीर्षक पर कर्मचारियों के लिए हिन्दी में निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

- संस्थान द्वारा देवनागरी साफ्टवेयर लीप ऑफिस खरीदा गया है। यह साफ्टवेयर लैन में उपलब्ध कराया गया है सभी कम्प्यूटर्स में हिन्दी टंकण की सुविधा उपलब्ध है।

- अधिकाँश फाइलों में हिन्दी में कार्य करने व टिप्पणी लिखने पर जोर दिया जा रहा है।

- हिन्दी के प्रयोग में प्रगति लाने के लिए कार्यालय के सदस्यों के ज्ञानवर्धन तथा कार्यालय उपयोग के लिए प्रतिदिन एक शब्द का हिन्दी अनुवाद कार्यालय के मुख्य नोटिस बोर्ड पर लिखा जा रहा है।

- संस्थान के पुस्तकालय एवं प्रलेखन केन्द्र में हिन्दी पुस्तकों के संग्रह को बढ़ाने के उद्देश्य से पिछले वर्ष उपन्यास, कविता संग्रह तथा वानिकी विषयों पर अनेक पुस्तकों को क्रय किया गया।

- संस्थान में विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया गया है जिसका गठन इस प्रकार है:–

1.	डा. मेहर सिंह, कुल सचिव	–	अध्यक्ष
2.	डा. वी.पी. उनियाल, वरिष्ठ व्याख्याता	–	सदस्य
3.	श्री एस. एस. लाम्बा, वित्त अधिकारी	–	सदस्य
4.	श्री पी.के. अग्रवाल, प्रशासनिक अधिकारी	–	सदस्य

5. श्री आई.जे. मल्होत्रा, आ.ले.प. अधिकारी – सदस्य
6. डा. एम.एस. राणा, पुस्तकालयाध्यक्ष – सदस्य
7. श्री राजेश थापा, सिस्टम मैनेजर – सदस्य
8. श्री के.के. श्रीवास्तव, सम्पादक – सदस्य
9. श्री ए.के. दुबे, लेखाकार – सदस्य
10. श्री नवीन चन्द्र कान्डपाल, वाहन चालक – सदस्य
11. श्री भुवनचन्द्र उपाध्याय, परिचर – सदस्य
12. श्रीमति बलजीत कौर, हिन्दी अनुवादक – सदस्य–सचिव

♦ इस वर्ष हिन्दी पत्रिका के प्रकाशन के उद्देश्य में प्रकाशन समिति का गठन किया गया जो इस प्रकार से हैः–

1. श्री एस. सिंगसिट, निदेशक – संरक्षक
2. डा. मेहर सिंह, कुल सचिव – अध्यक्ष
3. डा. जी.एस. रावत, सीनियर रीडर – सदस्य
4. श्रीमति बितापी सी. सिन्हा, रीडर – सदस्य
5. डा. एम.एस. राणा, पुस्तकालयाध्यक्ष – सदस्य
6. श्री के.के. श्रीवास्तव, सम्पादक – सदस्य
7. श्री एस. विल्सन, दृश्य श्रृव्य तकनीशियन – सदस्य
8. श्री विरेन्द्र शर्मा, कम्प्यूटर कार्मिक – सदस्य
9. श्री ए.के. दुबे, लेखाकार – सदस्य
10. श्री एम.डी. गुप्ता, उच्च श्रेणी लिपिक – सदस्य
11. श्री नवीन चन्द्र काण्डपाल, वाहन चालक – सदस्य
12. श्रीमति बलजीत कौर, हिन्दी अनुवादक – सदस्य–सचिव

संस्थान के सदस्यों के सहयोग से यह कार्यालय हिन्दी के विकास एवं विस्तार में निरन्तर प्रयत्नशील है।

लद्दाख में मारमट युगल फोटो : डा. मेहर सिंह, भा.व.से.

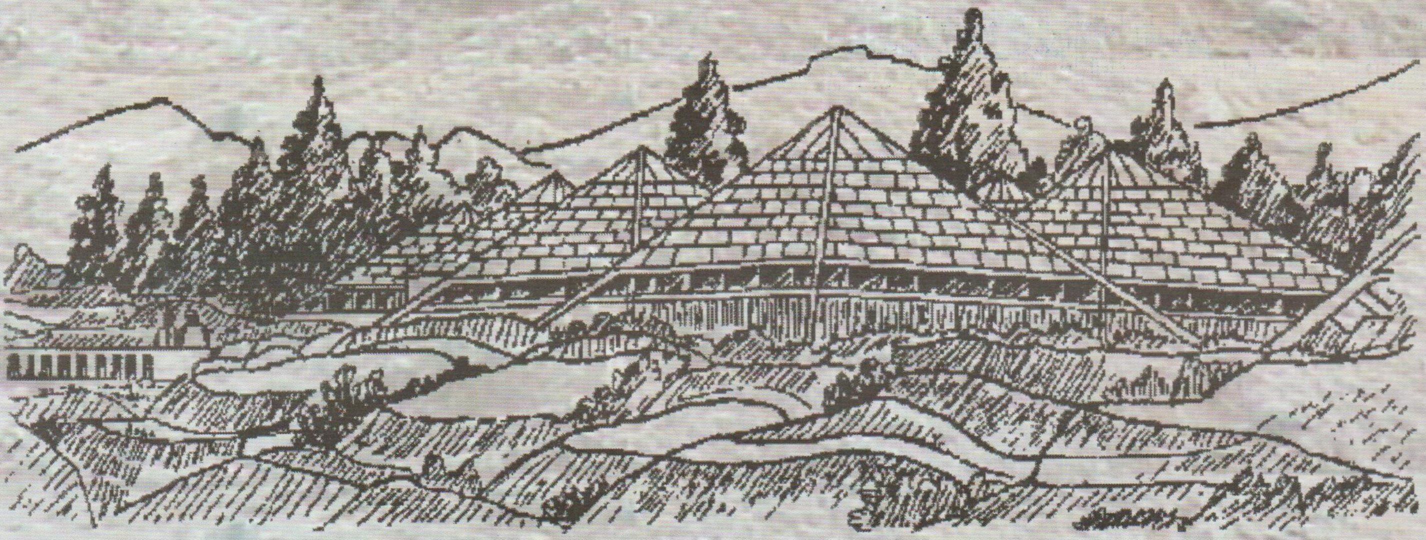

भारतीय वन्यजीव संस्थान

पो.ओ. बॉक्स न. 18, चन्द्रबनी,

देहरादून – 248 001

दूरभाष : 0135-2640111-115, फैक्स : 0135-2640117

वेबसाइट : www.gov.in

Print Vision Tel.: 2652627, 2629970